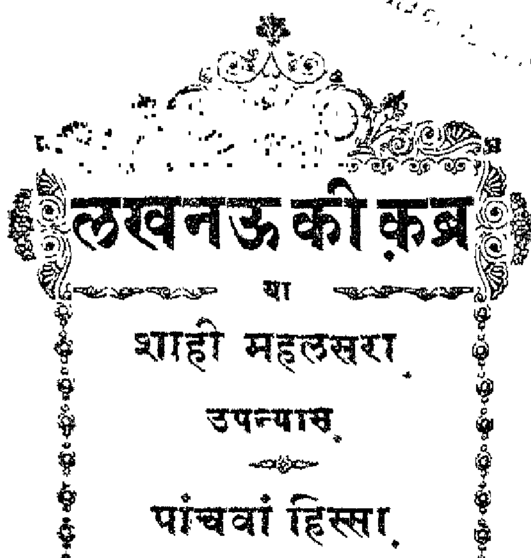
श्रीः



लखनऊ की क़ब्र

या

शाही महलसरा

उपन्यास.

पांचवां हिस्सा.

श्रीकिशोरीलालगोस्वामि-लिखित.

श्रीछबीलेलालगोस्वामि-द्वारा

"श्रीसुदर्शनप्रेस,"—वृन्दावन में मुद्रित और प्रकाशित.

प्रथमबार १०००] सन् १९१६ ईस्वी [मूल्य आठ आने ।

श्रीः

लखनऊ की क़ब्र।

पांचवां हिस्सा।

भूमिका।

यह समय, हमारे उपन्यास के प्रेमी पाठकों को खूब याद होगा, जब हमारी "उपन्यास" मासिक पुस्तक को वे बड़े प्रेम से पढ़ते थे और उस "उपन्यास" मासिक पुस्तक के आदरणीय अनुग्राहक ग्राहक थे। समय के फेर से ऐसा मौक़ा आ पड़ा कि हमें काशी से वृन्दावन आकर अपने मन्दिर और ग्राम को सम्हालना पड़ा और कई बरस तक उसी ग्राम का दीवानी मुक़द्दमा लड़ना पड़ा। श्रीजी की कृपा से कई बरस के बाद अपने गांव का मुक़द्दमा तो हम जीत गए, पर इस अदालती झमेले में फंस जाने के कारण हमारे और आपके बड़े स्नेह की सामग्री "उपन्यास" मासिक पुस्तक को बन्द रहना पड़ा। इस विषय का विशेष वृत्तान्त आप "उपन्यास" मासिक पुस्तक की भूमिका में भी देखेंगे। ख़ैर, श्रीजी की अपार कृपा से अब बहुतसी झंझटें एक तरह से दूर होगई हैं, और निज का "श्रीसुदर्शन" प्रेस भी खोला गया है, ऐसी अवस्था में अब "उपन्यास" मासिक पुस्तक बराबर निकला करेगी। अब आपसे सादर अनुरोध है कि आप कृपाकर इस "उपन्यास" मासिक पुस्तक के ग्राहक होइए और पहिले ही की तरह बड़े प्रेम से हमारे उपन्यासों को पढ़कर हमारा उत्साह बढ़ाइए। "लखनऊ की क़ब्र" के चार हिस्से तक छापकर "उपन्यास" मासिक पुस्तक आराम करने लग गई थी, इसलिये अब उसी "लखनऊ की क़ब्र" के पांचवें हिस्से से यह फिर शुरू की जाती है।

रसिकानुगामी,

श्रीकिशोरीलालगोस्वामी।

श्री:

लखनऊ की क़ब्र

या

शाही महलसरा.

पांचवां हिस्सा.

पहिला बयान.

आह यह मैं क्या देख रहा हूं! यह क्या ख़्वाब है, या ख़याल है! अल्लाह, मैं तो शाही महलसरा के अन्दर की हवा खा रहा था, लेकिन अब मैं कहां हूं! आह, यह मैं क्या जानूं कि मैं कहां हूं, या यह क्या देख रहा हूं! क्या यह बियाबान जङ्गल और क़ब्रिस्तान भी शाही महलसरा के अन्दर है, या मैं जागता नहीं, गोया सोरहा हूं! ओफ़! मेरी अक़ल इस वक़्त क्या होगई! क्या अब तक जो कुछ मैंने देखा था, वही ख़्वाब था, या इस वक़्त मैं जो कुछ देख रहा हूं, इसी को ख़्वाब समझूं! या परवरदिगार! तूने तो मुझे ख़ूबही भूलभुलैयां में भुला रक्खा है!!!

मैंने हरचन्द जांचकर देखा तो मुझे यही जान पड़ा कि यह न ख़्वाब है, न ख़याल है; बल्कि मैं जाग रहा हूं, अपने होशोहवास में हूं और जो कुछ देख रहा हूं, यह ख़्वाब नहीं है; लेकिन मैं उस महलसरा के अन्दर से इस बियाबान जंगल और क़ब्रिस्तान में क्योंकर आया! अल्लाह, अल्लाह, यह क्या? यह मेरे बग़ल में सरसे पैर तक चादर ताने हुए कौन ख़ुर्राटे लेरहा है! क्या इसे जगाऊं

और इससे पूछूं कि,—'अय, नेकबख़्त ! यह कौन सा मुक़ाम है !' लेकिन, नहीं; किसी सोते हुए को नाहक़ दिक़ न करना चाहिए और थोड़ा सब्र करना चाहिए; क्योंकि थोड़ी देर में यह सोनेवाला ज़रूर ही जागेगा, तब इससे यह मालूम कर लिया जायगा कि,—'यह कौन सी जगह है !' पर तब तक मैं बैठा-बैठा क्या करूं ! ख़ैर, तबतक अल्लाह की इबादत ही क्यों न करूं !

यह सोच और उठकर मैंने सुबह की नमाज़ पढ़ी और उससे फ़ारिग़ होकर ज्योंहीं मैं बैठा था कि वह अजनबी जागा और अँगड़ाइयां और जम्हाइयां ले उठता-उठता मेरे मुंह की ओर ज़रासा देख और फिर मुंह फेरकर आपही आप यों बड़बड़ाने लगा,—

"अय, ख़ुदावन्दकरीम ! सुबह-सुबह किसी ऐसे का मुंह न दिखलाइयो कि आबोदाना भी जल्दी न नसीब हो ! "

उस अजनबी शख़्स की ऐसी बेतुकी बातें सुनकर मैं झल्ला उठा और यों कहने लगा,—"अय, अजनबी ! तू कौन है और क्यों ऐसी बातें मुंह से निकाल रहा है ? ख़ुदा बड़ा रज़्ज़ाक़ है और वह हर शख़्स को रोज़मर्रह रज़क पहुंचाया करता है । दुनिया में शायद ही ऐसा कोई बशर होगा, जो कि दिनभर भूखा रहजाता हो ! मेरा तो यह ख़याल है कि हर शख़्स सुबह को उठता तो भूखा है, मगर भूखा सोता नहीं; लेकिन काश अगर कोई शख़्स तमामदिन भूखाही रह जाय तो इसमें ख़ुदावन्दकरीम का क्या क़सूर है ? इसमें तो मेरे जान, जो कुछ क़सूर है, अपनी क़िस्मत का है; क्योंकि इस दुनियां में हर एक शख़्स अपनी करनी का नतीजा पाता रहता है । "

मेरी इन बातों को सुन और मेरी जानिब बग़ैर देखे ही वह शख़्स यों कहने लगा,—"बेशक, भई ! तुम्हारा फ़र्माना बजा है, लेकिन जो शख़्स आस्मानी गर्दिश का शिकार हो जाता है वह हरएक कदम

फूंक-फूंक कर रक्खा है। गरज़ यह कि मैंने इस ज़िन्दगी में ऐसे ऐसे सदमे उठाए हैं कि जो क़ाबिल इज़हार नहीं; इसी लिये आगकर उठते-उठते वे कलमें मेरे मुंह से निकल गए थे। अगर मेरी वे बेहूदा बातें तुम्हें बुरी मालूम हुई हों तो तुम मुझे माफ़ी दो और यों समझ लो कि, 'तुमने कुछ सुना ही नहीं!' क्यों, अब तो तुम्हारे दिल से मेरी वाहियात बातों का खयाल जाता रहा?"

उस अजनबी की ये बातें सुनकर मैंने मनही मन यों सोचा कि, 'क्या, यह शख़्स मुझसे भी बढ़कर बदक़िस्मत है!' ख़ैर, मैंने आजिज़ी के साथ कहा,—"भई, अजनबी! तुम्हारी इन बातों से मेरे दिल का ख़याल बदल गया और मैंने तुम्हारी वे बातें बिलकुल भुला दीं; लेकिन साथही इसके, इतना मैं भी कह सकता हूं कि जो-जो ग़म मैंने उठाए हैं, शायद तुमने उनका ख़्वाब भी न देखा होगा!"

मेरी इतनी बातें सुनकर वह अजनबी तेज़ी के साथ घूमा और मेरी तरफ़ मुख़ातिब होकर कहने लगा,—"अय, ख़ूबसूरत नौजवान! क्या तूभी मेरी ही तरह रंजोअलम में गिरफ़्तार है?"

अल्लाह-आलम! क्या इन्सान भी इतना ख़ूबरू होता है! प्यारे, नाज़रीन! मैं तो उस अजनबी नौजवान की लामिसाल ख़ूबसूरती देखता ही रहगया! अभी इसने मुझे "ख़ूबसूरत नौजवान" कहा था लेकिन मैं तो उस गबरू जवान के तलुवे की भी बराबरी नहीं कर सकता! गो, मुझे अबतक अपनी ख़ूबसूरती पर बड़ा घमन्ड था और हूं भी मैं दरअसल ख़ूबरू; मगर नहीं, आज उस अजनबी नौजवान की ख़ूबसूरती ने मेरा सारा नशा उतार दिया और मैं ख़ुदा की अजीबोग़रीब शान देखकर हैरत में आगया! मैं टकटकी बांधकर उसके ख़ुशरंग चेहरे की तरफ़ घूरता रह गया और उसकी बातों के जवाब देने का ख़याल मेरे दिल से जाता रहा।

यह देख और मुस्कुराकर उसने फिर मुझसे वही सवाल

किया,—"अय, ख़ूबसूरत नौजवान ! क्या तू भी मेरी ही तरह रंजो अलम में गिरफ़्तार है ?"

अब मैं चुप न रह सका और उसकी तरफ़ नज़र गड़ा कर देखता हुआ कहने लगा,—"हां, भई ! मैं भी एक निहायत ही ग़मज़दा बशर हूं और आस्मानी गर्दिश में गिरफ़्तार हूं। लेकिन, दोस्त ! तुम कौन हो, कहां के रहने वाले हो, क्या नाम है,– – –"

यह सुन और मुझे रोककर उसने ज़रासा मुस्कुराकर कहा,– "बस, बस, मिहरबानी करके सवालों का पुल न बांधो और काश अगर कुछ पूछना हो तो एक-एक करके पूछो; क्योंकि इस वक़्त मैं ऐसी गर्दिश में मुब्तिला हूं कि मेरा जी ठिकाने नहीं है, इसलिये तुम्हारे इतने सवालों को याद रखने या उनके सिलसिलेवार जवाब देने की ताक़त मुझमें बाक़ी नहीं रह गई है।"

उस ख़ूबसूरत जवान की ऐसी दर्द-अङ्गेज़ बातें सुनकर मुझे निहायत अफ़सोस हुआ और एक आह सर्द खैंचकर मैं कहने लगा,—"अफ़सोस, तुमभी मुझे मिले तो रंजोअलम का जामा पहिने ही मिले ! ख़ैर, बक़ौल शख़्से कि,—'ख़ूब निबटेगी जो मिल बैठेंगे दीवाने दो;' क़िस्सह कोताह, अब मैं तुमको अपने पास से दूर न करूंगा, अपनी कहूंगा, तुम्हारी सुनूंगा और गो, इस वक़्त बवजह गर्दिश के मैं इस क़ाबिल नहीं रह गया हूं कि तुम्हारी कुछ मदद कर सकूं; लेकिन फिर भी बसरोचश्म मैं तुम्हारी ख़िदमत बजा लाऊंगा और जहां तक होसकेगा, तुम्हारी तबीयत ख़ुश करने की कोशिश करूंगा।"

मेरी बातें सुनकर वह अजनबी नौजवान मुस्कुराया और कहने लगा,—"अच्छा, ख़ैर, जो होगा, देखा जायगा; मगर यह तो बतलाओ कि यह कौनसी जगह है ?"

अल्लाह आलम ! यह क्या ! अरे, यह भी ऐसा ही सवाल करने लग गया ! यह बात क्या है ! और मैं किस भूलभुलैयां में पड़

गया हूं !

और, मुझे चुप देखकर वह फिर बोला,—" क्यों, म्यां ! क्या तुम कुछ बहरे हो ? "

मैंने घबराकर कहा,—" अगर सिर्फ़ बहिरा ही नहीं, साथ ही साथ अंधा भी होता तो बहुत ही अच्छा होता !"

उसने कहा,—" क्यों, इसकी वजह ? "

मैंने कहा,—"वजह यही कि अगर हम-तुम-दोनों आपस में एकही से सवालात करने लगेंगे और जवाब देने के लिये हम-दोनों में से कोई भी तयार न होगा, तो फिर ऐसी हालत में क्या किया जायगा ? "

वह बोला,—" लेकिन मैं तुम्हारी किस बात का जवाब दूं !"

मैं बोला,—" यही कि यह कौन सा मुक़ाम है, जहां पर कि इस वक़्त हम-तुम-दोनों मौजूद हैं ?"

वह,—" ऐसा सवाल तो अभी मैं ही तुम से कर चुका हूं !"

मैं,—" तो क्या तुम इस जगह को मुतलक़ नहीं जानते ?"

वह,—" अगर जानता होता तो बतलाने में उज़्र क्यों करता !"

मैं,—" तो तुम कौन हो और क्योंकर इस बेजानी-पहचानी जगह में आपहुंचे ?"

इतना सुन और मुहं फेरकर उसने एक आह सर्द खैंची और फिर मेरी तरफ़ देख यों कहना शुरू किया,—" अजनबी, दोस्त ! तुम्हारे इन दो सवालों के जवाब देने के पेश्तर, मैं अपनी गर्दिश के कुछ हालात सुनादेना मुनासिब समझता हूं; क्योंकि अब बग़ैर अपना क़िस्सा सुनाए, न तो तुम्हें ही चैन पड़ेगा, और न मेरे ही दिल को तस्कीन होगी। ख़ैर सुनो—मैं कश्मीर का रहनेवाला एक सौदागर-बच्चा हूं। मेरी मा कब मरगई थी, इसकी तो मुझे कुछ भी ख़बर नहीं; लेकिन तीन साल का अरसा हुआ कि मेरा वालिद भी बेशुमार दौलत छोड़कर कूच कर गया। फिर तो शहर

की मक्खियों की तरह खुशामदी टट्टुओं ने मुझे घेर लिया और मैं भी उन क़ज़्ज़ाकों के दाम में फंसकर तमाशबीनी में दोनों हाथों से अपने बाप की पैदा की हुई दौलत निहायत ही बेदर्दी के साथ लुटाने लग गया। अफ़सोस! उस वक्त हवाई घोड़े पर सवार रहने की वजह से यह बात मेरे खयाल में मुतलक़ नहीं आई थी कि, 'यह दौलत चन्दरोज़ा है, और इस तरह बेदर्दी के साथ लुटाए जाने पर तो कारूं का खज़ाना भी एक न एक दिन खाली होजा सकता है;' मगर खैर, एक साल के अन्दर ही अन्दर मेरी सारी दौलत जाती रही और उसीके साथ ही साथ मेरा सारा नशा भी काफ़ूर होगया! शहद के न रहने से वे शहद की मक्खियां—मेरे जांनिसार दोस्त—भी उड़गईं और नौबत फ़ाक़ेकशी तक जा पहुंची। आखिर मजबूर होकर अपना वतन छोड़ना और नौकरी की तलाश में इधर उधर मारे मारे फिरना पड़ा। कुछ दिनों तक मैं हैदराबाद में एक घोड़े के सौदागर का मीरमुन्शी रहा और इस अर्से में मैंने दो पैसा जमा भी कर लिया; लेकिन आस्मानी आफ़त ने वहां भी मुझे चैन से न रहने दिया। इसका सबब यह हुआ कि मेरा मालिक कुछ घोड़ों के साथ लाहौर आया और मुझे भी उसके साथ आना पड़ा। लाहौर आकर मेरा दिल निहायत खुश हुआ और एक मुसव्विर के साथ मेरी दोस्ती होगई! कुछ दिनों तक तो मेरी बड़े चैन के साथ कटी, लेकिन फिर वही गर्दिश की बारी आपहुंची – – –"

मैं बीच ही में बोल उठा,—"क्या फिर तुम निगोड़ी गर्दिश के शिकार हुए!"

वह कहने लगा,—"हां, दोस्त! फिर मुझपर क़यामत बर्पा हुई और मैं इस तरह मटियामेट होगया कि अब किसी काम ही का न रहा!"

मैंने कहा,—"ऐसा! तो मिहरबानी करके यह क़िस्सा भी अगर सुनाने क़ाबिल हो, तो सुना डालो।"

उसने कहा,—" सुनो, कहता हूं,—यह बात मैं अभी कह आया हूँ कि लाहौर में आकर एक मुसव्विर के साथ मेरी दोस्ती होगई। धीरे धीरे-वह दोस्ती यहां तक बढ़ी कि हम-दोनों 'एक जान दो कालिब' होगए। एक दिन का ज़िक्र है कि वह मेरा दोस्त मुसव्विर मुझे तरह-तरह की तस्वीरें दिखला रहा था, इतने में उन तस्वीरों में से एक ऐसी बेनज़ीर तस्वीर आंखों-तले आपड़ी कि मैं बेखुदी के आलम में गिरफ्तार होगया और वह उस तस्वीर को हाथ में लेकर उस मुसव्विर से यों पूछने लगा कि,—"अय दोस्त! यह किस परीपैकर की तस्वीर है?"

"यह सुनकर उस मुसव्विर ने कहा,—"दोस्तमन! यह तस्वीर लखनऊ के एक जौहरी की दुख़्तर की है और नाम इस का परी-बानू है। चन्दरोज़ का अर्सा हुआ कि वह जौहरी, जिस का नाम मुर्शिद कुलीखां था, जवाहिरात के ख़रीद-फ़रोख़्त करने की नीयत से यहां आया और मेरे परोस में ठहरा हुआ था। कई रोज़ के अन्दर ही अन्दर उसके साथ मेरी दोस्ती होगई और वह यहांतक बढ़ी कि तर्फ़ैन से सारा पर्दा उठ गया। उसकी एक निहायत ही हसीन और कमसिन लड़की थी, जिसका नाम परी-बानू था; बस, यह तस्वीर उसी परी-बानू की है। उसके बाप की मर्ज़ी-मुताबिक़ मैंने परी-बानू की दो तस्वीरें तयार की थीं, जिनमें से एक तो वह अपने साथ लेगया और दूसरी यह मेरे पास अभीतक मौजूद है, क्यों कि इसे मैंने चोरी से बनाकर अपने पास रख लिया था।"

"गरज़, बानू के इश्क़ का तीर ऐसा कारी मेरे जिगर में लगा था कि मैं बेताब होकर तड़पने लग गया था। आख़िर, मैंने उस मुसव्विर का पैर थाम लिया और रोकर कहा,—" प्यारे, दोस्त! अगर मेरी जान अज़ीज़ हो तो तुम यह तस्वीर मुझे दे डालो।"

" मेरी बातें सुनकर उस सौदागर ने ताज्जुब में आकर मुझसे

कहा,—" प्यारे, दोस्त ! तुम यह तस्वीर लेकर क्या करोगे ?"

"इस पर मैंने कहा,—" मैं इसपर शैदा हूं, पस इस तस्वीर को अपने गले का हार बनाऊंगा और बानू के पास जा और उस के क़दमों पर गिर, गिड़गिड़ा और रो-रो-कर उसकी मिहरबानी हासिल करूंगा। अगर उसने मुझपर रहम किया तो ज़हे क़िस्मत, वर ना उसीके रू-ब-रू यह जान उसपर निछावर करदूंगा और इस दुनियां से अपना नामोनिशान मिटा दूंगा।"

"मेरी बातें सुनकर उस मुसव्विर ने पहिले तो मुझे बहुत कुछ समझाया-बुझाया, लेकिन जब मैं किसी तरह भी अपनी ज़िद से बाज़ न आया तो उसने एक ठंढी सांस भरकर वह तस्वीर मेरे हवाले की और मैं खुशी-खुशी उससे गले-गले मिल और रुख़सत हो, अपने डेरे पर आया। डेरे पर आकर और कुछ झूठा फ़िक़रा बतला कर मैं अपने मालिक से रुख़सत हुआ और रास्ता लखनऊ का पकड़ा। कई दिनों तक यों ही तनहा सफ़र करने के बाद मुझे एक क़ाफ़िला सौदागरों का मिला, जो लखनऊ की तरफ़ आरहा था। बस, मैं खुदा-बन्द करीम की इस मिहरबानी पर निहायत ही खुश हुआ और दिलही दिल में उसका शुक्रिया अदा करके उस क़ाफ़िले के हमराह हुआ। उस काफ़िले के अफ़सर को हिसाब-किताब रखने के लिये एक मुन्शी की ज़रूरत थी, उस काम पर मैं मुक़र्रर होगया और निहायत मुस्तैदी से मालिक के काम का अंजाम देने लगा। वह भी मेरी मुस्तैदी और लियाकत देखकर निहायत खुश हुआ और दो ही चार रोज़ के अन्दर उसने मेरा मुशाहरा दुचन्द कर दिया। यों हीं होते-होते धीरे-धीरे हमलोग लखनऊ की तरफ़ आने लगे। कल शाम का ज़िक्र है कि एक गांव के सिवाने पर वह काफ़िला ठहरा और वहीं पर रात गुज़ारने की तज़बीज़ की गई। बीच में ख़ीमें खड़े किए गए, उनके हर-चहार-तरफ़ दीगर आदमियों और घोड़ों की रावटियां खड़ी की गईं और साथ के कुत्ते, जो गिनती में

बीस से ज़ियादह थे, ज़ंजीरों से खोल दिए गए। कोई खाना बनाने में मशगूल हुए, कोई आराम करने लगे और कोई बैठकर आपस में दिल्लगी-मज़ाक करने लगे। यों हीं धीरे-धीरे पहर रात बीती और हमलोग दस्तरख्वान पर बैठे। अभी दोही चार लुकमें हलक के नीचे उतरे थे कि यक-ब-यक कुत्ते बड़े ज़ोर-ज़ोर से भूंक उठे और बंदूकों की आवाज़ें हर-चहार-तरफ से सुनाई देने लगीं। आखिर, काफ़िले में यह शोर मचा कि, 'डाकू आए, डाकू आए!' यह ख़तरनाक ख़बर सुनते ही सब के सब घबरा उठे और जो जिस हालत में था, उठकर अपने-अपने हर्बे-हथियार सम्हालने लगा; लेकिन सब बेफ़ायदा हुआ, क्योंकि चारो तरफ़ से आकर डाकुओं ने इस तेज़ी के साथ छापा मारा कि सबके हाथ पैर ढीले पड़गए और किसीसे कुछ भी करते-धरते न बना! उस वक़्त मुझे और तो कुछभी न सूझा, बस चट चाकू से ख़ीमें का कपड़ा काट चुपचाप उसके बाहर निकल पड़ा और एक तरफ़ को खिसक गया। रात अंधेरी थी और गुल गपाड़े के मारे किसी के भी होशोहवास ठिकाने न थे; डाकू भी अपनी मनमानी लूट-खसोट में मशगूल थे; चुनांचे मुझे आसानी से निकल भागना नसीब हुआ और कुछ दूर तक धीरे-धीरे आकर, फिर अपनी जान लेकर मैं एक तरफ़ को तेज़ी के साथ भागा। खूब भागा, और खूबही तेज़ी के साथ भागा; मगर किस तरफ़ भागा और कितनी दूर भागा, इसकी मुझे कुछभी ख़बर न रही! ग़रज़, यों हीं दौड़ते-दौड़ते मैंने एक दरख़्त की ठोकर खाई और गश खाकर मैं गिर गया; उसके बाद मुझे अब होश हुआ है! इसलिये दोस्त! अब तुम्हीं बतलाओ कि तुम्हारे उस सवाल का, 'कि यह जगह कौनसी है,' मैं क्या जवाब देसकता हूं?"

मिहर्बान, नाज़रीन! उस खूबसूरत अजनबी जवान के इस हैरत-अङ्गेज़ क़िस्से को सुनकर मैं निहायत अफ़सोस करने लगा और उससे बोला 'मेरे प्यारे दोस्त' जो कुछ गुज़र गई, उसका

ख़याल अब अपने दिल से दूर करो और ख़ुदा पर भरोसा रक्खो। वह परवरदिगार, बड़ा कारसाज़ है, चुनांचे वह तुम्हारी सब मुश्किलों को आसान करेगा; और तुम तो फ़ाज़िल शख़्स हो, इस लिये कहीं न कहीं तुम्हें ज़रूर ही नौकरी मिलजायगी और ज़ियादह तकलीफ़ न उठानी पड़ेगी। बिल्फ़ैल तो मैं तुम्हें अपने साथ रक्खूंगा और जहां तक मुझसे होसकेगा, मैं हरतरह से तुम्हारी ख़िदमत करूंगा।"

मेरी बातें सुनकर उस अजनबी ने एक आह सर्द खैंची और अपनी चादर के कोने से अपनी आँखें पोंछकर यों कहा,—"भई, दोस्त! मैं तुम्हारा निहायत ममनून-अहसान हुआ कि तुमने मुझ ग़मज़दे के साथ इतनी हमदर्दी ज़ाहिर की। मैं बसरोचश्म तुम्हारे साथ रहना मंज़ूर करता हूं और यही चाहता भी हूं कि इस तनहाई के आलम में मुझे ग़ैर शहर में कुछ आराम मिले। गो, इस वक़्त मैं आसमानी-गर्दिश का शिकार होरहा हूं, लेकिन मुझे उम्मीद कामिल है कि वह मालिक हमेशा ही मुझ पर ऐसी नामिहर्बानी न रक्खेगा और मैं फिर भी आरामोचैन से अपना दिन बिता सकूंगा। अगर तुम मेरी कुछ मदद किया चाहते हो तो सिर्फ़ तुम्हारी इतनी ही मिहर्बानी काफ़ी होगी कि तुम मुझे एक मामूली नौकरी दिलवा देना; बस, उतनी ही से बिलफ़ैल मेरा गुज़ारा होजायगा और चन्द रोज़ के बाद, जब कि मैं भले आदमियों में खड़े होने क़ाबिल होलूंगा, तब अपनी दिलरुबा बानू से मुलाक़ात करूंगा; क्योंकि इस वहशी की सूरत से भला मैं उस परीपैकर के रू-ब-रू क्योंकर जाऊं और किस तरह उसे अपने ऊपर मिहर्बान बनाऊं!"

उस अजनबी मुसाफ़िर की दर्द-अंगेज़ बातों ने मेरे दिल को मसल डाला और मैंने निहायत हमदर्दी के साथ कहा,—"भाईजान, क़समख़ुदा की, तुम्हारी हालत देख व सुनकर मैं बहुत ही मायूस हुआ हूं ख़ैर तुम अपने दिल में हिरासा न होवो, और

उस पाक परवरदिगार पर इतमीनान रक्खो; वह बड़ा कारसाज़ है और अपने बन्दों की मुश्किलों को आसान करना उसका एक अदना काम है। मैं जहांतक हो सकैगा, तुम्हारी ख़िदमत करने से मुंह न मोड़ूंगा और तुम्हें हर तरह से आराम पहुंचाने की कोशिश करूंगा। गो, इस वक़्त मेरी भी हालत निहायत अपतर हो रही है, लेकिन जब कि हम-तुम दोनों मिलकर मुस्तैदी के साथ इस कम्बख़्त बदक़िस्मती से जङ्ग करेंगे, तो ज़रूर ही फ़तहयाबी हासिल होगी। बक़ौल शख़्से कि, 'हिम्मते मर्दां मददे खुदा'। अच्छा ख़ैर, यह तो बतलाओ कि सब कुछ गवांदेने पर भी क्या वह तस्वीर अभी तक तुम्हारे पास मौजूद है ?"

इस पर उसने अपने चुग़े के ज़ेब से निकाल कर एक छोटीसी तस्वीर मेरे हाथ में दी और बड़ी खुशी के साथ यों कहा,—"हां भाई, सब कुछ चले जाने पर भी मेरी जान से भी अज़ीज़ यह तस्वीर मेरे पास बच रही है। लो, देखो, और बग़ौर देखकर तुम्हीं बतलाओ कि दुनियां में ऐसा कौन बशर है, जो इस खूबरू नाज़नी के तीरे-मिज़गां का निशाना अपने तईं न बनाना चाहे। अगर यह तस्वीर भी कहीं मेरे हाथ से निकल गई होती तो अबतक इस कालिब से जान भी निकल गई होती !"

अल्लाह, अल्लाह, यह मैं क्या देख रहा हूं ! ओफ़ ! मैं क्या फिर उन्हीं ख़्वाबोख़याल के आलम में गिरफ़्तार हो गया ! नाज़रीन ! मैं सच कहता हूं कि वह तस्वीर, जिसे कि बानू की तसवीर बतला कर उस अजनबी ने मेरे हाथ में दिया था, मेरी प्यारी दिलाराम की सूरत-शक्ल से बिलकुल मिलती-जुलती-हुई थी, बल्कि यों कहना चाहिए कि वह तस्वीर दिलाराम ही की मालूम देती थी। मैं देर तक बग़ौर उस तस्वीर को देखता रहा। न मालूम कितनी देर तक मैं उस बेखुदी के आलम में गिरफ़्तार रहता, लेकिन उस अजनबी ने वह तस्वीर मेरे हाथ से लेकर अपने चुगे की जेब में

रक्खी और मुस्कुराकर यों कहा,—" वल्लाह, तुम तो इतने ग़ौर के साथ इस तस्वीर को देखने लगगए कि गोया खुद भी इसके इश्क में मुब्तिला हो गए ! "

उसकी ऐसी बातें सुनकर मैने एक आह सर्द खैंची और कहा,— "नहीं दोस्त, जैसा तुम कह रहे हो, वह बात नहीं है— — — "

मेरा जुमला पूरा भी न होने पाया था कि उसने जल्दी से यों पूछा,—"तो क्या है ?"

मैंने कहा,—" वह यह है कि जिस तस्वीर को तुम अपनी दिलरुबा बानू की बतला रहे हो, वह मेरी प्यारी दिलाराम की सूरत-शक्ल से इतनी मिल रही है कि अगर इसे मैं बानू की तस्वीर न मानकर दिलाराम की तसव्वुर करूं तो बेजा न होगा; यही सबब था कि मैं देर तक ग़ौर उस तस्वीर को देखता रहा । "

मेरी इस सच्ची, लेकिन ताज्जुब पैदा करने वाली बात को सुनकर उस अजनबी ने अपने हाथ पर हाथ मारकर बड़े ज़ोर से एक क़हक़हा लगाया और बड़ी तनज़ के साथ कहा,—" मालूम होता है कि तुम इस तस्वीर को देखकर सौदाई हो गये हो ! ! ! "

मैंने कहा,—"एं ! सौदाई ! मगर ख़ैर, इस वक़्त तुम जो कुछ कहो, सब बजा है; वजह इसकी यह है कि बिलफ़ैल न तो मैं अपनी दिलरुबा दिलाराम को ही तुम्हें दिखला सकता हूं और न उसकी तस्वीर को ही । "

उसने कहा,—"क्यों, इसकी वजह ? दोस्तों के दर्म्यान यह रुकावट कैसी ? जब कि मैंने अपनी माशूक़ा की तस्वीर तुम्हें दिखलाई है तो तुम्हें भी लाज़िम है कि तुम भी अपनी दिलरुबा की अगर सूरत दिखलाने में परहेज़ रखते हो तो उसकी तसवीर तो ज़रूर ही दिखलाओ । "

यह सुन मैंने बड़ी आजिज़ी के साथ कहा,—"दोस्त ! अफ़सोस, मैं इन दोनों में से अभी कोई भी तुम्हारे सामने पेश नहीं कर

सकता; वजह इसकी यह है कि वह मेरी दिलरुबा दिलाराम या उसकी तस्वीर—ये दोनों ही इस वक़्त मेरे कब्ज़े से बाहर हैं।"

उसने कहा,—"तुम्हारी यह पहेली सी बातें मेरी समझ में मुतलक़ न आईं!"

मैंने कहा,—"यह बात तो बिलकुल साफ़ है और इसका खुलासा यह है कि मेरी दिलाराम चन्द अर्से से ग़ायब है और उसकी तस्वीर भी मेरे पास नहीं है।"

यह सुन और कुछ देर तक मेरे चेहरे की तरफ़ ग़ौर देखकर उस अजनबी ने यों कहा,—"ऐसा! ओफ़ तबतो मालूम होता है कि तुम्हारा क़िस्सा भी निहायत ही दर्द-अङ्गेज़ व दिलचस्प होगा!"

मैंने कहा,—"बेशक, मेरी दास्तान भी काबिल सुनने के है, लेकिन इस वक़्त तुम मुझे माफ़ करो; क्योंकि दिन पहरभर से ज्यादह आ चुका है और भूख प्यास ने भी मुझे बेतरह सताना शुरू कर दिया है। तुम देख ही रहे हो कि यह बियाबान जङ्गल का मुक़ाम है और पास खाने को कुछ भी नहीं है। जब तक कि किसी बस्ती में जाकर भीख न मांगी जाय, आबोदाने से मुलाक़ात होनी दुश्वार होगी; क्योंकि बन्दे के पास इस वक़्त एक फूटी कौड़ी भी नहीं है; बस, यही मेरी मौजूदा हालत है, जो तुम्हारे आगे मुफ़स्सिल बयान करदी गई है।"

मेरी बातें सुनकर उस अजनबी ने आसमान की तरफ़ देखा, फिर मेरी जानिब मुख़ातिब होकर यों कहना शुरू किया,—"कुछ परवाह नहीं, तुम ज़रा भी फ़िक्र न करो और सब्र अख़्तियार करो। भीख मांगने या भूखों मरने की कोई ज़रूरत नहीं है; क्योंकि बन्दे की कमर में कुछ पैसे बंधे रहे हैं, इस लिए फ़ौरन बस्ती की तलाश में तुम्हारे हमराह रवाना होता हूं और किसी सराय में डेरा डाल कर खाने-पीने का इन्तज़ाम करता हूं। जब

कि खुदा के फ़ज़ल से हमारा तुम्हारा साथ हो गया है, तो यह बात इन्सानियत के बईद है कि मेरे पास पैसे के होते हुए भी तुम भीख मांगो और मैं चैन उड़ाऊं! नहीं, ऐसा हरगिज़ न होगा और मैं हत्तुल-मकदूर तुम्हें तकलीफ़ पाने न दूंगा।"

उस दिलावर अजनबी की ऐसी दिलेरी की बातें सुनकर मैंने उसका शुक्रिया अदा किया, और उसके हाथ को अपने हाथ में लेकर बड़ी मुहब्बत के साथ चूम लिया। इसके बाद खुदा-खुदा कहकर हम दोनों उठ खड़े हुए और बस्ती की तलाश में एक तरफ़ को रवाना हुए। मैं हर-चहार-तरफ़ उस जङ्गल में नज़र दौड़ा-दौड़ाकर इस बात की कोशिश में लगा हुआ था कि जिसमें उस जङ्गल की बखूबी पहचान रक्खूं, क्योंकि शायद कभी उस जङ्गल में फिर आने का इत्तिफ़ाक होजाय! मगर मेरी उस जांच-परताल को देखकर मेरे साथी ने मुझे टोका और हंसकर यों कहा,—"वल्लाह, तुमतो, भई! इस जङ्गल को बड़े ग़ौर के साथ देख रहे हो!"

मैंने कहा,—"हां, यह तुमने ठीक समझा; वजह इसकी यह है कि मेरे ऐसे बदबख़्त के लिये जङ्गल-पहाड़ों को बग़ौर देखना वैसा ही है, जैसा कि दौलतमन्द शख़्सों का गुलज़ार चमनों या पुर-आबाद शहरों का मुलाहिज़ा करना!"

लेकिन, मेरे इस फ़िक़रे का फिर उसने कुछ जवाब न दिया और मैं उस रास्ते को ख़ूब ग़ौर के साथ देखता और दिलही दिल में उसका नक़्शा खैंचता हुआ एक तरफ़ को चला। उस वक़्त मेरा वह मन चला साथी अपने सुरीले गले से यों तान उड़ाने लग गया था,—

"बहार आई है भरदे बादयेगुलगूं से पैमाना।
रहे लाखों बरस साक़ी तेरा आबाद मैख़ाना॥"

दूसरा बयान ।

दोनों आदमी धीरे-धीरे आगे बढ़े । गो, उस वक़्त दिन पहर भर से ज़ियादह चढ़ आया था और भूख भी शिद्दत की लगी हुई थी, लेकिन अनजान जगह होने के सबब मज़बूरन हम-दोनों को हर-चहार-तरफ़ देख-देख-कर इसलिये आहिस्ते-आहिस्ते चलना पड़ता था कि जिसमें कहीं बेरास्ते जाकर नाहक़ भटकना न पड़े।

क़िस्साकोताह, यों ही क़रीब एक घण्टे के, बराबर एक जानिब को चले जाने पर एक दर्या नज़र आया और उसके किनारे पहुंच और चारों तरफ़ बग़ौर देखकर मैंने बड़े ताज्जुब से कहा,—"एँ, यह तो दर्याए-गोमती है ! ! !"

मेरा चिहुंकना देखकर मेरे साथी उस अजनबी शख़्स ने भी ताज्जुब के साथ कहा,—"एँ, क्या कहा तुमने ? क्या यही दर्याए-गोमती है ?"

मैंने कहा,—"हां, इसमें कोई भी शक न करना चाहिए।"

उसने कहा,—"तो क्या, हमलोग लखनऊ के क़रीब आगए ?"

मैं,—"क़रीब क्या, बल्कि हमलोग तो लखनऊ के अन्दर ही मौजूद हैं ! गो, यहां से शहर ज़रा दूर है, लेकिन हैं हम लोग लखनऊ के अन्दर ही हैं।"

वह,—"वल्लाह, दोस्त ! यह तो तुमने निहायत खुशख़बरी सुनाई ! जिस लखनऊ के लिए बन्दा एक मुद्दत से तरस रहा था, उसी लखनऊ के अन्दर दाख़िल होजाने से इस क़दर खुशी हासिल हुई है, कि जो क़ाबिलइज़हार नहीं ! मगर ख़ैर, अब हमलोगों को यहीं ठहर जाना चाहिए और मामूली कामों से फ़ुर्सत पाकर कुछ नाश्ता-वाश्ता करने के बाद शहर में दाख़िल होना चाहिए; क्योंकि दोपहर हुआ चाहता है और कम्बख़्त भूख ने भी बेतरह सता रक्खा है"

यह सुनकर मैंने कहा,—"हां, बेशक, यह तो तुमने बहुत ठीक कहा; लेकिन शहर में जाने-बग़ैर, नाश्ता-वाश्ता की मिसिल क्योंकर लगेगी ?"

उसने कहा,—"इसकी तुम ज़रा फ़िक्र न करो; क्योंकि मेरे पास कुछ मेवे वग़ैरह मौजूद हैं, जिनसे बिल्फ़ेल काम चल जायगा; फिर शहर में चलने और डेरा-दुरुस्त होने के बाद देखा जायगा। मेरी राय तो यह है कि यहीं पर ज़रूरी कामों से फ़ारिग़ होकर कुछ घण्टे आराम किया जाय और तीसरे पहर शहर में चला जाय।"

ग़रज़, मैंने अपने अजनबी दोस्त की बातें पसन्द कीं और फिर वहीं पर ठहरकर हम-दोनों आदमी अपने-अपने ज़रूरी कामों में मशग़ूल हुए।

एक घण्टे के अन्दर-अन्दर हमलोगों ने ज़रूरी कामों से फ़ुर्सत पाकर खूब अच्छी तरह गोमती में ग़ुसल किया, इसके बाद कुछ मेवे-वग़ैरह खाकर दो-चार चुल्लू पानी पीया। इसके बाद एक अच्छी सी जगह देख और एक दरख़्त की साया में बैठकर हमलोग आपस में गप-शप करने लगे।

मेरे साथी ने कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद यों कहा,—"क्यों भई, क्या यह बात तुम्हें बिलकुल नहीं मालूम है कि कल तुम कहां थे और आज अलस्सुबह कहां पर तुम्हारी नींद टूटी ?"

मैंने कहा,—"दोस्त, आज सुबह-सुबह जहां पर मैं ख़्वाब से बेदार हुआ, यह तो तुम्हें मालूम ही है; लेकिन इसके क़ब्ल, यानी आज के पेश्तर (कल) मैं किस मुक़ाम पर था, यह मैं तुम्हें सुनाता हूं,—आज कई माह का अर्सा हुआ कि मैं एक रोज़ आधी रात के वक़्त इसी गोमती के क़िनारे इत्तिफ़ाक़िया आपहुंचा और वहां पर एक अजनबी शख़्स के साथ मेरी मुलाक़ात हुई। उसने नाहक़ मेरे

साथ इस तरह की गुफ्तगू शुरू की कि जो बरदाश्त के बाहर थी। आखिर, नौबत तलवारों की आपहुंची और मैंने उसका काम तमाम कर उसकी लाश इसी गोमती में बहा दी। इसके बाद एक नक़ाबपोश मेरे सामने नमूदार हुआ, जिसने मुझे अपने साथ चलने के लिये कहा। मुझे मुनासिब था कि मैं उस फ़तूरिए के दम में न आता और अपने तईं उस बला से अलग रखता; लेकिन जो कुछ शुदनी थी, वही पेश आई और मैं उसके हमराह हुआ। उसने मेरी आखों पर पट्टी बांधी और मुझे आंखें रहते ही अन्धा बनाकर न जाने कहां लेजाकर खड़ा कर दिया! इसके बाद मेरी आखों से जब पट्टी दूर कीगई तो मैंने अपने रू-ब-रू एक निहायत हसीन और नमकीन नाज़नी को खड़ी देखा! उसके साथ कुछ गुफ्तगू करने का भी मौक़ा मुझे नसीब नहीं हुआ था कि यक-ब-यक कई शख़्सों ने आकर मुझे गिरफ़्तार कर लिया और मेरी नाक में ज़बर्दस्ती बेहोशी की दवा ठूंस दी गई! फिर जब मैं अपने होश में आया तो मैंने अपने तईं एक क़फ़स में क़ैद पाया। फिर तो अजब दिल्लगी शुरू हुई और मैं खिलौने के मिसाल एक के बाद दूसरी, और उसके बाद तीसरी—यौंही बराबर नई-नई नाज़नीनों के हाथों में पड़ता और तरह-तरह के सदमें उठाता गया! इसके साथही साथ मेरे क़ैदखाने की भी बराबर तबदीली होती गई और मैं कभी अच्छे क़ैदखाने में बाआराम, और कभी निहायत ही नाक़िस और मनहूस क़फ़स में बड़ी तकलीफ़ के साथ रक्खा गया! जिस वक्त मैं इस आसमानी गर्दिश में गिरफ्तार हुआ था, वह ऐयाम गरमी का था, यानी महीना जेठ का था, और अब यह मौसिम शायद अखीर जाड़े का है, लेकिन अब इस वक़्त यह मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि यह कौनसा महीना है – – –"

मैं ऊपर लिखीहुई दास्तान को जबतक कहता रहा, वह अजनबी अपना रुख दूसरी जानब को किए हुए बड़ी लापरवाई के साथ

मेरा किस्सा सुनता रहा, फिर मेरी जानिब बग़ैर देखे ही चट बोल उठा,—"यह महीना फागुन का अखीर और चैत का शुरू है; लेकिन दोस्त, तुमने तो यह एक अजीब दास्तान सुनाई कि जिसने मेरे दिल में खलबली पैदा करदी! मगर खैर, यह तो बतलाओ कि जिस मुक़ाम पर तुम उस नकाबपोश के हमराह जा पहुंचे थे और तरह-तरह की ज़िल्लतें तुमने उठाई थीं, वह दर-असल कौनसा मुक़ाम है?"

उस अजनबी शख़्स की यह बात सुनकर मैंने उससे शाही महल-सरा का असली हाल कहना मुनासिब न समझा और कुछ झूटमूंठ बातें गढ़कर यों कहा,—"दोस्त! इस बात के जानने की मैंने हरचंद कोशिशें कीं लेकिन यह मुतलक़ न जान सका कि मैं इतने दिनों तक किस मुक़ाम पर क़ैद था! हां, इतना ज़रूर कहूंगा कि मैं किसी अमीर-घराने की बदकार औरतों के फेर में पड़ गया था और कुछ दिनों तक मैंने बड़े-बड़े सदमे उठाए थे। तुम यह बात सुनकर निहायत खुश होगे कि इतनी सांसतें भोगने पर भी मैं उस कफ़स से जीता-जागता बेदाग़ बचकर निकल आया; लेकिन क्योंकर निकल आया, या किसने मुझे उस कफ़स से लाकर इस बियाबान जङ्गल में पटक दिया, यह बात मेरी समझ में मुतलक़ न आई और न ताक़यामत आवै ही गी! हां, दिल ही दिल में इतना मैं ज़रूर समझ रहा हूं कि जब मुझसे किसी ऐयाश नाज़नी का काम न निकला तो मैं बिलकुल बेकार समझा गया और बेहोश करके रात के वक़्त इस बियाबान जङ्गल में डाल दिया गया। चाहे यह कार्रवाई मेरे साथ किसी दुश्मन ही ने क्यों न की हो, लेकिन मैं तहेदिल से उस शख़्स का शुक्रिया अदा करता हूं कि जिसने मुझे उस बला से छुटकारा दिलाकर आज़ाद कर दिया। अब अगर मेरी बद-क़िस्मती ने फिर मेरे सिर पर शैतान का साया न पहुंचाया तो मैं हरगिज़ इस ख़तरनाक राह में भूलकर भी कदम न रक्खूंगा और

दुनियां के जाल-व-फरेब से अपने तईं हरतरह बचाए रखने की कोशिश करता रहूंगा।"

मेरी इन बातों को वह अजनबी ग़ौर के साथ सुनता रहा या लापरवाही के साथ, यह तो वही जानें; क्योंकि उसका रुख़ दूसरी जानिब था, इसलिये मैं उसके चेहरे के उतार-चढ़ाव का हाल नहीं जान सकता था; लेकिन जब मैंने अपना क़िस्सा पूरा किया तो उसने मेरी तरफ़ बग़ैर देखे ही उसी तरह बेपरवाही के साथ कहा,—

"हूं! तुम्हारा क़िस्सा तो निहायत दिलचस्प है! लेकिन इस का न सिर है; न पैर; न आग़ाज़ है, न अख़ीर, न लज़्ज़त है, न लुत्फ़; और न इससे कुछ नतीजा निकलता है. न मतलब! दर-असल बात यह है कि या तो तुम्हारे दिमाग़ में फ़ितूर आगया है, जिसके सबब से तुम वहशीपने की बातें कर रहे हो; या तुम्हारे सर पर कोई ज़िन्द सवार है, जिसने तुम्हारे होशोहवास को ग़ारत कर दिया है; या यह भी होसकता है कि तुम कोई बड़े भारी मसख़रे हो और मुझ अजनबी बेकस मुसाफ़िर को तख़लिए में पाकर उस के साथ ऐसी बेहूदा छेड़छाड़ करने लगगये हो; और यह भी हो सकता है कि तुमने कोई बड़ा भारी सपना देखा हो, जिसका ख़याल अभी-तक तुम्हारे दिल से दूर नहीं हुआ हो और दिमाग़ चक्कर में आगया हो! ख़ैर, अब, जब कि ख़ुदा के फ़ज़ल से तुम्हारा साथ हुआ है तो मैं इस बात के लिये बड़ी मुस्तैदी के साथ कोशिश करूंगा कि जिसमें तुम्हारा यह पागलपन दूर हो; क्योंकि मैं तिब्ब में भी कुछ दख़ल रखता हूं और तुम्हारे ऐसे वहशियों की तबीयत ठीक कर देने की हिक़मत बख़ूबी जानता हूं।"

यों कहकर और अपने हाथ पर हाथ मार कर उस अजनबी नौजवान ने इस ढंग से क़हक़हा लगाया कि मैं हैरत में आगया और दिल ही दिल में यों सोचने लगा कि,—'यह मुमकिन है कि इसने मेरी बातों पर यकीन न किया हो तबतो यह इस क़िस्म की

बातें करने लग गया है ? और हां, मेरी बातों पर जो इसके दिल का ऐसा ख़याल हुआ, इसमें ताज्जुब ही क्या है ? क्योंकि मैंने अपना हाल जिस छिपे ढंग से बयान किया है, उसे सुनकर कोई शख़्स भी उस पर एतकाद नहीं कर सकता; लेकिन लाचारी है, क्योंकि उस पोशीदा राज़ को मैं किसी ग़ैर शख़्स पर हरगिज़ ज़ाहिर नहीं किया चाहता।'

मुझे चुप देखकर उस अजनबी ने फिर एक क़हक़हा लगाया और बड़ी शोख़ी के साथ फिर यों कहा,—"क्यों मियां मजनूं ! अब यह तो बतलाओ कि मेरी बाज़ू की जिस तस्वीर को तुम अपनी दिलरुबा की शबीह बतलाते थे, तुम्हारी वह दिलरुबा क्या हुई और क्योंकर या किसलिये तुम्हें छोड़कर ग़ायब होगई ? "

उसकी यह बात सुनकर मेरे जिगर में एक तीर कारी लगा और प्यारी दिलाराम के ख़याल ने मुझे बेचैन कर दिया मैंने कई आहें सर्द खैंचीं और निहायत बेकली के साथ यों कहा,—"दोस्त-मन-सलामत ! मेरी प्यारी दिलाराम के बारे में जो सवाल तुमने किया, अगर उसका जवाब मेरे दिल में आ लिया होता तो फिर यह रोना ही क्यों नसीब होता ! अगर वह परीरू मुझसे किनारा न कर गई होती तो मैं उसकी जुदाई में दीवाना बनकर क्यों गली-गली की ठोकरें खाता, क्यों इधर-उधर मारा-मारा फिरता, क्यों उस शब को गोमती के किनारे जा दाख़िल होता और क्यों उस नक़ाबपोश के दम-दिलासे में आकर इस तरह कई महीने तक क़ैदख़ाने की तकलीफ़ें उठाता ! अगर ऐसा मेरी बदक़िस्मती के बाइस न हुआ होता तो फिर शायद इस तरीक़े पर हमारी-तुम्हारी मुलाक़ात ही न होती और अगर काश हो भी जाती तो तुम्हें ऐसे सवाल करने का कोई ज़रिया ही न मिलता। अफ़सोस, अफ़सोस ! अब मैं अपनी दिलरुबा दिलाराम को कहां तलाश करूं और क्योंकर उसे पाऊं ! "

मेरी दर्द-अंगेज़ बातें सुनकर उस अजनबी नौजवान ने मेरी तरफ़ बग़ैर देखे ही एक आह सर्द खैंची और अपने हाथ को मलकर यों कहा,—"मेरे प्यारे दोस्त! अगर मैं यह जानता होता कि मेरा यह सवाल तुम्हारे दिलपर इस क़दर सदमा पहुंचाएगा तो हर्गिज़ मैं इसे अपनी ज़बान पर न लाता; लेकिन ख़ैर, जो तीर हाथ से निकल जाता है, वह फिर अपने कब्ज़े में नहीं रहता; इस लिये मैं दस्तबस्ता तुमसे मांफ़ी चाहता हूं और उम्मीद करता हूं कि तुम मेरी बातों का ख़याल अपने दिल से दूर कर दोगे। सुनो यार, मैं कुछ हाज़रात भी जानता हूं, इसलिये मैं तुम्हारी दिलाराम को तुम्हारे रू-ब-रू लाकर खड़ी कर देने के वास्ते चिल्ले बांधूंगा और जिस तरह हो सकैगा, तुम्हारे दिल से इस रञ्जो-अलम को दूर कर दूंगा। उस हाज़रात में दो चीज़ों की ज़रूरत पड़ती है,— एक नाम की और दूसरी सूरत-शक्ल की; पस, नाम तो तुम जानते ही हो, रही सूरत-शक्ल की बात, वह काम मैं अपनी इस बानू की तस्वीर से निकाल लूंगा, क्योंकि यह बात, तुम्हारी ज़बानी मालूम होचुकी है कि यह तस्वीर तुम्हारी दिलरुबा की सूरत-शकल से बिलकुल मिलती-जुलती हुई है।"

मैं उस अजनबी शख़्स की इन अजीब क़िस्म की बातों को सुनकर बड़ा हैरान हुआ और मन ही मन यों सोचने लगा कि,— 'यह अजीब शख़्स इन्सान है या शैतान! यह अपने को तबीब भी बतला रहा है और हाज़रात जाननेवाला भी बनरहा है, लेकिन दर-असल यह जादूगर, है कौन बशर! अय ख़ुदावन्द-करीम! तू अब मुझे हरबला से बचा, जिसमें फिर मैं किसी आफ़त में गिरफ़्तार न होजाऊं।'

मुझे ख़ामोश देखकर वह अजनबी ज़रा तिरछी निगाहों से मेरीतरफ़ देख और फिर अपना रुख़ फेरकर यों कहने लगा,—"क्यों हज़रत! क्या मेरी बातें तुम्हारे कानों में नहीं गईं?"

मैने कहा,—"अजी गई और ज़रूर गई; लेकिन यह तो बतलाओ कि तुम मेरे साथ मज़ाक तो नहीं कर रहे हो ?"

उसने कहा,—"चेखुश ! मज़ाक़ की एक ही कही तुमने ! अजी जनाब, ईंजानिब मर्दों के साथ मज़ाक़ नहीं करते; लेकिन हां, अगर तुम अपने को कुछ और समझते हो तो मेरी बातों को मज़ाक में शुमार कर सकते हो !"

उसकी ऐसी बेढङ्गी बातें सुनकर मुझे उस वक़्त हंसी आगई और मैने क़हक़हा लगाकर कहा,—"बेशक, अब मैने जाना कि दर-असल तुम तबीब हो, तब तो तुमने मेरी मर्दानगी का मुलाहिजा या तजुरबा किया !"

मेरी इस दिल्लगी को सुनकर वह खिलखिलाकर हंस पड़ा और मेरी तरफ़ ज़रा सा रुख फेरकर यों कहने लगा,—"अल्लाह आलम, तुम तो भई, बड़े मज़ाक़ के आदमी हो ! लिल्लाह, मेरी तुम्हारे साथ खब निबटेगी और बड़े मज़े में दिन गुज़रेंगे। ख़ैर, अब दिन एक पहर से ज़ियादा बाक़ी नहीं है, इसलिये मुनासिब समझो तो शहर की जानिब चलो; क्योंकि दिन ही दिन में डेरे वग़ैरह के ठीकठाक करने में सुभीता होगा; अगर रात होजायगी तो बेजाने शहर में तकलीफ़ उठानी पड़ेगी।"

इस पर मैने कहा,—" नहीं, इसकी फ़िक्र तुम ज़रा न करो; क्योंकि यह शहर मेरा अच्छी तरह जाना हुआ है, इसलिये डेरे की तलाश में ज़ियादा न भटकना पड़ेगा और बड़ी आसानी के साथ उम्दा से उम्दा जगह दस्तयाब होसकेगी। मगर ख़ैर, अब चलना ही चाहिए। यहांसे शहर क़रीब एक कोस के होगा, इसलिये अगर शहर में चलने का इरादा हो तो शहर की तरफ़ चलो और अगर पेश्तर डेरा वग़ैरह ठीक करना हो तो इसी गोमती के किनारे-किनारे पूरब-जानिब को आध कोस तक चले चलो; वहां पर ऐन गोमती के किनारे एक निहायत उम्दा और आलीशान सराय बनी

हुई है, जो 'ज़मुर्रद की सरा' के नाम से मशहूर है। वह लखनऊ के बादशाह शुजा-उद्दौला की बनवाई हुई है और तीन मंज़िल की है। उसमें हर तरह का आराम है और उसमें जाकर हर एक मुसाफ़िर महीनों तक बड़े आराम के साथ रह सकता और उसे किराया एक पैसा भी नहीं देना पड़ता है। जहांतक मैंने देखा और सुना है, यही बात देखने और सुनने में आई है कि लखनऊ में इससे बिहतर दूसरी सरा नहीं है।"

मेरी बातें सुनकर वह अजनबी नौजवान निहायत खुश हुआ और हंसकर कहने लगा,—"अल्-हम्द-लिल्लाह! भई, अजनबी दोस्त! क़सम खुदा की, तुम्हें पाकर मैं वाक़ई निहायत खुश हुआ, इसे अल्लाहताला की मिहरबानी समझनी चाहिए और साथही इसके यह भी समझना चाहिए कि, गर्दिश के दिन गए और खुशी के दिन क़रीब आगए हैं।"

मैंने कहा,—"वाक़ई, दोस्त! अब आसार तो ऐसे ही नज़र आने लगे हैं। खुदा करे, तुम्हारा कहना सच होजाय और खुशी के दिन नसीब हों। वाक़ई बात तो यह है कि तुम भी लुटेरों से बेदाग़ बचकर एक दम लखनऊ में आ दाखिल हुए हो, और बन्दा भी मौत के पंजे से बाल बाल बच आया है; पस, ऐसी हालत देख कर तुम्हारी कही हुई बातों की मैं तहे दिल से ताईद करता हूं।"

क़िस्साकोताह, फिर तो हम दोनों उठ खड़े हुए और चलते चलते वह अजनबी बोला,—"तो बिहतर होगा कि पेश्तर चलकर उस सरा में डेरा डाला जाय; बाद इसके शहर की सैर की जायगी।"

फिर तो गोमती के क़िनारे-क़िनारे ही हम दोनों आपस में बातें करते हुए आगे बढ़ते गए, और एक घंटे के अन्दर-अन्दर उस ज़मुर्रद की सरा के क़रीब जापहुंचे।

तीसरा बयान ।

वह सरा, जब क़रीब सौ क़दम के रह गई, तब मेरे साथी नौजवान ने मेरी तरफ़ मुख़ातिब हो और उस सरा की तरफ़ हाथ का इशारा करके, यों कहा,—"अच्छा दोस्त, अब ज़रा यहीं पर ठहरजाओ और मेरी दो-चार बातें सुनलो। एक तो यह कि ऐसी आलीशान सरा के अन्दर हम-तुम-सरीखे ख़ानाबदोशों का घुसना मसलहत नहीं है,—क्योंकि इस सरा की तड़क-भड़क शाहाना है, और हम लोगों की सूरतशक्ल महज़ फ़क़ीराना। चुनांचे जबतक हमलोगों की यह मौजूदाहालत तबदील न होजाय और भले आदमियों के से कपड़े-लत्ते मुहैया न होजायं, तबतक इस आलीशान इमारत (सरा) के अन्दर क़दम रखना महज़ हिमाक़त होगी। पस, मेरी राय तो यह है कि बिलफ़ैल किसी दीगर मामूली सरा में जाकर डेरा-डुरुस्ता कियाजाय; फिर जैसा होगा, देखा जायगा।"

मैंने उस अजनबी नौजवान की इस बात को दिल से पसन्द किया और कहा,—"वाक़ई, मैं तुम्हारी इस बात से इत्तिफ़ाक़ करता हूं और दूसरी सरा में चलने के लिये तयार हूं। एक सरा यहां से कुछ दूर पर बस्ती के बाहर है, जो महज़ मामूली है और जहां पर अक्सर कम-हैसियत लोग ठहरा करते हैं। ख़ैर, तो अब हमलोगों को यहीं से दक्खिन जानिब की ओर घूमजाना चाहिए और बस्ती के बाहरही बाहर चलना चाहिए; क्योंकि मैं भी इस शहर में बहुत से लोगों के साथ जान-पहिचान रखता हूं; पस, अगर इस अब्तर हालत में मुझे कोई जान-पहिचान-वाला भला आदमी देख पायेगा, तो मारे सवालों के नाक में दम करदेगा; इसलिये यही बिहतर होगा कि हम लोग शहर के बाहरही बाहर चलकर उस सरा में दाख़िल हों।"

मेरी बातें सुनकर उस अजनबी ने कहा,—"बिहतर है; चूंकि

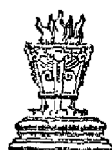
मैं मुसाफ़िर हूं और तुम इस शहर के बाशिन्दे हो; इसलिये बिहतर होगा कि तुम्हीं मेरे रहबर हो, आगे क़दम बढ़ाओ; मैं भी तुम्हारे पीछे-पीछे चला चलता हूं।"

यह सुनकर मैं आगे हुआ और वह शख़्स मेरे पीछे-पीछे चला। चलते-चलते उसने मुझसे यों कहा,—"दोस्त, यह बड़े अफ़सोस की बात है कि इतनी देर तक साथ रहने पर भी अबतक न मैंने तुम्हारा नाम जाना और न तुमने मेरा; इसलिये यह बिहतर होगा कि हमलोग, एक दूसरे का नाम जानलें और सरा में चलने पर किसी दीगर शख़्स के रू-ब-रू हम लोगों को आपस में अनजान बनना न पड़े; क्योंकि अगर ऐसा होगा तो सरावालों का ख़याल हम लोगों की जानिब से कुछ बदल जायगा और वे लोग हमलोगों के साथ जासूसी करने लग जांयगे। यह तो तुम्हें मालूम ही हो चुका है कि, 'मैं किस ग़रज़ से यहां आया हूं;' पस, यह मैं नहीं चाहता कि मेरे असली हाल जानने की कोई कोशिश करे; अगर ऐसा हुआ, तो मुमकिन है कि शायद मेरे काम में कुछ उल्झन पड़जाय; इसलिये तुम अपना नाम मुझे बतलादो और मेरा तुम याद कर रक्खो। 'मेरा नाम मन्सूर है और मैं देहली का रहनेवाला जौहरी हूं;' बस, बिलफ़ेल तुम इतनाही याद कर रक्खो और अगर कोई शख़्स मेरे बारे में तुमसे कभी कुछ दर्याफ़्त करे तो तुम सिर्फ़ इतनाही कहना, जितना कि अभी मैंने तुम्हें बतलाया है। तुम अगर मुनासिब समझना, तो मुझे अपना दोस्त भी लोगों में ज़ाहिर कर देना; लेकिन अभी चन्दा इसकी ज़रूरत नहीं है; हां, अगर कभी कोई वैसा मौका आजाय, इसलिये मैंने तुम्हें अभी से आगाह कर दिया है।"

उस अजनबी शख़्स की ये बातें, जो कि शायद उसने अपनी कोई बिहतरी सोचकर कही होंगी, मैंने ग़ौर के साथ सुनीं और फिर यों कहा "बिहतर, तुम्हारी बातें मैं हमेशा याद रक्खूंगा और

अगर कभी कोई शख़्स तुम्हारे बारे में मुझसे पूछ ताछ करेगा तो उसे मैं वैसाही जवाब दूंगा, जैसा कि तुमने मुझे अभी समझा दिया है। बेशक, तुम्हारी दूरअन्देशी को मैं पसन्द करता हूं, क्योंकि ज़िस काम के लिए तुम यहां पर आए हो, उस काम के अंजाम देने के लिये तुम्हें बहुत होशियारी के साथ यहां रहना चाहिए; क्योंकि यह लखनऊ है और यहां पर ऐसे ऐसे शोहदे मौजूद हैं कि जो मौक़ा पाने पर अजनबी मुसाफ़िरों को बेतरह जलील कियाकरते हैं। ख़ैर, इतना अब तुम भी याद करलो कि मेरा नाम यूसुफ़ है और मैं इसी शहर का बाशिन्दा हूं। मैं पेश्तर मुसव्विरी का कार करता था, लेकिन जब से उस आसमानी गर्दिश में गिरफ़्तार हुआ, जिसका हाल कि मुख़्तसर तौर पर तुम्हें सुना चुका हूं, बिलकुल गया-गुज़रा हो रहा हूं। गो, इस शहर में मेरा एक ख़ास मकान भी था और उसमें हज़ारों की लागत के अस्बाबात भी थे, लेकिन इस वक़्त मैं यह नहीं कह सकता हूं कि उस मकान का क्या हाल है और उसके अन्दर के सामानों का क्या अहवाल। ख़ैर, मैं बिलफ़ेल तो इसी सरा में, जहां पर कि मैं इस वक़्त जा रहा हूं, तुम्हारे साथ डेरा जमाऊंगा, फिर ज़रा तबीयत फ़रहत पाने पर अपने मकान की कैफ़ियत देखूंगा।"

ग़रज़, योंहीं आपस में बात चीत करते हुए हम दोनो शख़्स उस मामूली सरा के फाटक पर पहुंच गए, जो कि शहर के बाहर थी और जिसका नाम 'भटियारे की सरा' था।



चौथा बयान।

हम लोगों को सरा के फाटक पर मौजूद देखकर उसका मालिक भटियारा, जिसका सिन कि क़रीब सत्तर बरस के होगा, सामने आ और लम्बा सलाम करके बोला,—"क्या आप लोग मुसाफ़िर हैं? क्या आप लोगों को टिकने की जगह चाहिए? और क्या आप लोग बहुत दूर से आरहे हैं?"

मेरे साथी मन्सूर ने उसकी बातों का कोई जवाब न देकर सरा के अन्दर क़दम रक्खा; मैं भी उसके पीछे-पीछे था और वह सरा का भटियारा भी साथ होलिया था। यह मैं कह आया हूं कि यह सरा महज़ मामूली और कम-हैसियत लोगों के रहने लायक़ थी; यही सबब था कि यह उतनी साफ़-सुथरी न थी, लेकिन महज़ रद्दी भी न थी। ख़ैर, मेरे साथी ने एक मामूली कोठरी पसन्द करके उस भटियारे से उसका किराया पूछा और दो चारपाइयों की फ़र्माइश की।

उस कोठरी का किराया चारआने रोज़ बतलाया गया, जो कि उसकी हैसियत से बहुत ही ज़ियादा था; और दो चारपाइयों के किराए दो आने रोज़ मांगे गए,—ये भी बहुत गिरां थे। मगर ख़ैर, मेरे साथी मन्सूर ने अपनी कमर से निकालकर छःआने पैसे, उसदिन के किराये के, उस भटियारे के हाथ धरे। इतने ही में उस बुड्ढे की जोरू की भटियारी ने दो चारपाइयां लाकर उस कोठरी के अन्दर बिछादीं और हम-दोनों जाकर उस पर बैठ गए। इसके बाद भटियारी ने खाने-वग़ैरह की निस्वत पूछा, जिसके जवाब में मेरे साथी ने यह कहकर उसे रुख़सत किया कि,—'बिलफ़ैल किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है।'

उसके जाने पर मन्सूर ने मुझसे कहा,—"दोस्त यूसुफ़, मेरे उस्ताद का क़ौल है कि ग़ैर-जानी-जगहों में किसी अनजान

आदमी के हाथ का खाना न खाना चाहिए; क्योंकि अक्सर ये सरा के भठियारे बड़े शैतान होते हैं और खाने पीने की चीज़ों में कुछ खिला-पिला-कर मुसाफ़िरों को दिन-दहाड़े लूटलिया करते हैं; पस, मैं तो यहीं पर आराम करता हूं,—तुम बाज़ार जाओ और जो दिल चाहे, हम लोगों के खाने का सामान ख़रीद लाओ; क्योंकि मैं अजनबी हूं और तुम इस शहर के बाशिन्दे हो।"

यों कहकर मियां मन्सूरअली ने अपनी कमर से निकालकर मुझे दो रुपए दिए, जिन्हें लेते हुए मेरी गोया गर्दन कट गई! अफ़सोस! इस वक्त मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी न थी, वर न मैं हरगिज़ उससे रुपए न लेता और खाने-पीने का सामान खुद ख़रीद लाता; लेकिन लाचारी थी। अगर खुदा के फ़ज़ल से आज मुझे मन्सूर न मिलगया होता, तो सिवाय भीख माँगने के, और मैं किसी ज़रिये से पेट नहीं भर सकता था; ख़ैर, यह भी खुदा की शान है और इसके लिये मुझे उसका शुकुरगुज़ार होना चाहिए।

मैं रुपए लेकर वहीं चारपाई पर बैठा-बैठा दिलही दिल में ऊपर लिखी हुई बातें सोचने लग गया था कि मन्सूर ने मुस्कुराहट के साथ मेरी तरफ़ देखा और कहा,—"क्यों भई, तुम किस फ़िक्र या तरद्दुद में पड़ गए? क्या मुझसे रुपए लेने में तुम्हें कुछ शर्म मालूम होती है! अफ़सोस, अगर ऐसा तुम ख़याल करते हो तो यह बड़े अफ़सोस की बात है; क्योंकि क्या दोस्त का माल अपना माल नहीं है? आज तुम पर गर्दिश आई है, लेकिन ये दिन हमेशा न रहेंगे और खुदा के फ़ज़ल से कभी ऐसा मौक़ा भी आवेगा कि तुम बखुशी मेरे इन रुपयों का एवज़ अदा कर सकोगे; लिहाज़ा, अब ज़ियादा देर न करो और चटपट कुछ खाने को लाओ, क्योंकि मारे भूख के जान ओठों पर आरही है और सारा बदन सनसना रहा है!"

ग़रज़, मैं फिर कुछ न बोला और सरा से निकल कर बस्ती

की तरफ़ चला। उस वक़्त शाम हो चुकी थी और बाज़ारों में जा-ब-जा चिराग़ रौशन होने लग गए थे। मैं लोगों की नज़रों से अपने तईं बचाता हुआ एक नानबाई की दूकान पर पहुंचा और ज़रूरियात के सभी सामान उससे लेकर फ़ौरन सरा में वापस आया।

क़िस्साकोताह, फिर तो हम दोनों दोस्तों ने खूब नाक तक ठूंस-ठूंस-कर खाना खाया और एक पहर रात यों हीं गप-शप में बितादी।

इसके बाद कब मैं सोगया, इसकी मुझे कुछ भी ख़बर नहीं! लेकिन हां, अलस्सुबह मन्सूर ने जब मुझे जगाया तब मेरी नींद खुली। फिर तो हम दोनों शख़्स अपने ज़रूरियात के कामों में मशगूल हुए। इसके बाद रात के बचे हुए खाने को ठिकाने लगा कर मन्सूर ने मुझ से यों कहा,—"दोस्त यूसुफ़, इस अबतर हालत में हम लोग न तो बाज़ारों ही में निकल सकते हैं और न किसी भले आदमी के ही सामने खड़े होसकते हैं; चुनांचे मैं बिलफ़ेल बाज़ार जाता हूं और अपने व तुम्हारे लिये दो-चार जोड़ कपड़े-वगैरह ख़रीद लाता हूं। हां, तुम अपने पैर के नाप के जूते खुद ख़रीदलाना क्योंकि तुम्हारे पैर मेरे पैर से बड़े हैं। हां और कुल ज़रूरियात की चीज़ें मैं खुद ख़रीद लाता हूं।"

यों कहकर उस अजीब शख़्स ने मेरे हाथ में ज़बर्दस्ती पांच रुपए दे दिए! गो, मैंने उन रुपयों के लेने से बहुत कुछ इन्कार किया और यों कहा,—'बिलफ़ेल इसकी कोई ज़रूरत नहीं है;' लेकिन उसने मेरी एक न सुनी और यों कहा,—"नहीं, इसकी सख़्त ज़रूरत है; क्योंकि आबरू की पहिली मंज़िल 'पापोश' है; अगर यह न हो तो किसी शख़्स की भी आबरू कायम न रह सके,—चाहे वह कपड़े-लत्ते से कितना ही बना-ठना क्यों न हो! मैं वह भी ख़रीद लाता, लेकिन बग़ैर नाप के उसका लेना ठीक न होगा।"

यों कहकर मियां मन्सूर तो चलदिया और मैं देरतक तरह-तरह के ख़यालों में उलझा हुआ उसी चारपाई पर बैठा रह गया।

पांचवां बयान।

दिन क़रीब एक पहर के हुआ था, जब कि मन्सूर एक गठरी लिए हुए आ पहुंचा और उसे खाट पर रख और मेरी जानिब मुस्कुराहट के साथ देख यों कहा,—"क्यों भई, क्या अभीतक तुम मिसाल-बुत के यहीं बैठे-बैठे फ़ज़ूल वक़्त ज़ाया कर रहे हो?"

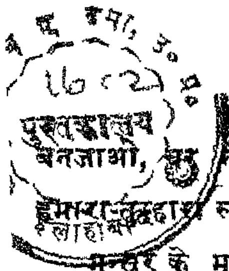
मैंने कहा,—"आख़िर, और मैं करूं तो क्या करूं; क्योंकि ख़ुदावन्द-करीम ने मुझे इतना फ़ज़ूल वक़्त अता किया है कि जो हरचन्द ज़ाया करने पर भी कम्बख़्त किसी तरह ज़ाया नहीं होता!"

मन्सूर,—(हंसकर) "लेकिन, ख़ैर, तुम्हारे लिये चाहे यह बात मौज़ूं हो, लेकिन, मेरा वक़्त निहायत बेशक़ीमत है और मैं उसमें का एक लहज़ा भी फ़ज़ूल ख़र्च करना नहीं चाहता; इस लिये मैं तो अब अपनी बानू की तलाश में जाता हूं और तुमसे यह कहे जाता हूं कि अगर मेरे आने में कुछ देर हो जाय या काश अगर मैं दो-एक-रोज़ ग़ायब भी रहूं तो तुम मेरे लिए ज़रा भी न घबराना और इस जगह को बग़ैर मेरी मर्ज़ी के न छोड़ना।"

यों कहकर उसने वह गठरी खोली और उसके अन्दर से बिल्कुल नए और उम्दा कपड़े निकालकर पहरना शुरू किया। थोड़ी ही देर में वह ख़ूबसूरत नौजवान एक जौहरीबच्चे की शक्ल बनगया और मेरी जानिब मुस्कुराहट के साथ देख यों बोला,—"क्यों, अब मैं कुछ जचने लगा न?"

उसकी यह बात सुनकर मैं बेसाख़्ता हंस पड़ा और बोला,—"अजी, 'कुछ' क्या, बल्कि बहुत कुछ! अबतो तुम ऐसे जचने लगे हो कि अगर तुम्हें कोहकाफ़ की परियां देख पावें तो फ़ौरन उठा ले जांय!"

यह सुन और अपने हाथ पर हाथ मारकर उसने एक क़हक़हा लगाया और कहा,—"वल्लाह, यह तो तुमने ख़ूब कहा! इसलिये बिहतर होगा कि तुम भी फौरन पोशाक बदलकर परियों के लायक



बनजाओ, [illegible] तुम्हें कोई मनहूस देव उठा ले जायगा, और [illegible] साथ छूट जायगा।"

मन्सूर के मज़ाक़ को सुनकर मैं खिलखिलाकर हंसपड़ा और कपड़े बदलने लगा। मैंने उस पोटली के अन्दर एक ज़री का निहायत उम्दा जूता भी देखा और उसे हाथ में लेकर मन्सूर से पूछा,—"क्यों दोस्त, यह जोड़ा किसके लिए है ?"

मन्सूर ने मुस्कुराकर कहा,—"तुम्हारे लिए।"

मैंने कहा,—"मेरे जोड़े की तुम्हें इतनी फ़िक्र है!"

मन्सूर बोला,—"आख़िर, मैं तुम्हारा दुश्मन तो हूं नहीं!"

नाज़रीन! यह बात सुनकर आप निहायत ताज्जुब करेंगे कि मन्सूर का लाया हुआ जूता मेरे पावों में इतना सही हुआ कि मैं क्या कहूं! उसकी ऐसी शऊरदारी, तबीयतदारी और तरहदारी देखकर मैं दङ्ग होगया, और कहने लगा,—"दोस्त मन्सूर, तुमतो भई, बड़ी ख़ूबी के आदमी हो! वल्लाह, मैं नहीं जानता था कि तुममें इतनी सिफ़तें भरी हुई हैं! लेकिन क्यों यार, उस बियाबान जङ्गल में तो तुम अपने तईं एक महज़ मामूली शख़्स बतलाते थे, मगर इस वक़्त तो तुम कुछ और ही नज़र आरहे हो!"

इस पर मन्सूर ने हंसकर कहा,—"आख़िर, उस वक़्त मैं अपने ज़र व जवाहिर का सच्चा हाल तुम पर क्योंकर ज़ाहिर कर सकता था! अगर तुम कोई लुटेरे होते या उन्हीं डाकुओं में से होते, जिन्होंने कि उस शब को मेरे क़ाफ़िले पर डाका डाला था, तो क्या होता! यही वजह थी कि उस बियाबान जङ्गल में जब मेरी नींद खुली थी, तो तुम्हारी तरफ़ से अपना मुंह फेर कर मैंने वह कलमा अपने मुंह से निकाला था, जिसे शायद तुम अबतक भूले न होंगे!"

यह सुनकर मैंने हंसदिया और कहा,—"अजी, उस कलमें का ख़याल तो मैंने तुम्हारे हुक्म बमूजिब उसी वक़्त अपने दिल से

दूर कर दिया था! इस लिये अब मुझे वह बिल्कुल याद नहीं है!"

इतना सुन और क़हक़हा लगाकर मन्सूर ने मेरे हाथ पर हाथ मारा और उसे ज़रा दबाकर कहा,—"अल्ला! तुम भी तो भई, निहायत रङ्गीली तबीयत रखते हो! वल्लाह, तुम्हारे साथ मेरी खूबही बनेगी!"

अल्लाह, अल्लाह, मन्सूर के मुलायम हाथ के छूने से मैं निहायत हैरत में आगया, क्योंकि अबतक मैंने सिवा नाज़नीनों के, किसी मर्द-बच्चे के हाथ में इतनी मुलायमियत नहीं देखी थी! मैं उस के हाथ की सिफ़तों पर न जाने दिलही दिल में क्या क्या सोचा करता, लेकिन मन्सूर ने मेरे ख़याल को दूसरी तरफ़ फेर दिया और एक छोटी सी पोटली खोल और उसके अन्दर से कुछ मेवे और मिठाइयां निकालकर यों कहा,—"लो दोस्त, अब ज़रा इतमीनान के साथ खूब मज़े में नाश्ता करलो। फिर मैं तो अपनी बानू की फ़िराक़ में रवाना होऊंगा और तुम भी, अगर दिल चाहे, तो शहर में घूम आना।"

ग़रज़, यह कि, नाश्ता-वाश्ता करने के बाद उस कोठरी में ताला लगाकर, जिसे कि मन्सूर बाज़ार से ख़रीद लाया था, हम लोग सरा के बाहर हुए। जिस वक़्त हम लोग बन-ठन-कर सरा से बाहर हो रहे थे, उस सरा की भटियारी, भठियारे, और दीगर शख्सों ने भरपूर नज़र गड़ाकर हमलोगों को देखा था! यह देख और सरा से कुछ दूर आगे बढ़ जाने पर मैंने मन्सूर से कहा,—"क्यों दोस्त, क्या तुमने सरा वालों की तिरछी निगाहें देखीं?"

मन्सूर ने कहा,—"हां, मैंने खूब ग़ौर के साथ देखा! यह बहुत ही अच्छा हुआ कि इन हरामज़ादों की बद निगाहों का पता मुझे फ़ौरन लग गया, वरन आगे चल कर इस सरा में रहने के सबब, न मालूम क्या क्या आफ़तें उठानी पड़तीं"

मैंने कहा,—"लेकिन, इन आफ़तों तो को तुम्हीं ने न्योत बुलाया!"

मन्सूर ने कहा,—"यह क्यों कर ?"

मैंने कहा,—"यों कि, इस महज़ मामूली सरा में जिस हैसियत से हम लोग आए थे, उसीके माफ़िक हम लोगों को गुज़रान करना था, लेकिन तुम्हें तो नव्वाबी सूझी, और फ़ौरन तुमने वह ठाठ बदला कि सरा वाले चौकन्ने हो गए!"

मन्सूर ने कहा,—"तो क्या, उन हरामज़ादों की दहशत के मारे मैं बिल्कुल खानाबदोश बना रहता और इस सरा में पड़ा पड़ा भाड़ झोंका करता! आखिर, मैं जिस काम के लिए आया हूं, उसका भी तो कुछ इन्तज़ाम करना चाहिए! ख़ैर, यह तो बहुत ही अच्छा हुआ कि इन बदमाशों की निगाहों का पता मुझे आनन-फानन लग गया वरन, मैं अगर धोखे में रहजाता और इस मनहूस सरा में रात काटनी चाहता तो अजब नहीं कि ये लुटेरे मुझपर रात के सन्नाटे में छापा मारते!"

मैंने घबराकर पूछा,—"तो अब रात क्योंकर या कहांपर गुज़ारी जायगी?"

मन्सूर ने कहा,—"मेरी राय तो यह है कि तुम भी आजकी शब किसी और सरा में काट डालो, मैं भी किसी जगह रात गुज़ार डालूं; लेकिन इतना याद रहे कि कल अलस्सुबह हम लोग इस सरा में ज़रूर आ मिलें; फिर आपस में सलाह करके कोई दूसरी आराम की जगह का इन्तज़ाम किया जायगा।"

यों कहकर और ज़बरदस्ती मेरे हाथ में, बीस रुपए थमा कर, फिर मुझसे 'जौहरी बाज़ार' का रास्ता पूछकर मन्सूर तो उस तरफ़ रवाना हुआ, और मैं उस जानिब को चला, जिधर मेरा मकान था।

छठवां बयान

शायद नाज़रीन यह बात भूले न होंगे कि शाहीमहलसरा की एक लौंडी ने, जिसने की अपना नाम ज़ोहरा बतलाया था, मुझसे यह कहा था कि,—'तुम्हारे मकान का अब नामोनिशान भी बाक़ी नहीं है और शैतान आसमानी के उभाड़ने से किसीने तुम्हारे घर को नेस्तोनाबूद कर उस जगह एक आलीशान मसजिद बनवादी है (१)।' पस, मेरा इरादा हुआ कि ज़रा उस तरफ़ चलूं और जाकर देखूं कि उस लौंडी ने जो कुछ कहा है, वह कहांतक सही है!

बस, दिलही दिल में यों सोचकर मैं अपने मकान की तरफ़ चला। थोड़ी ही देर में जब मैं उस मुकाम पर पहुंचा, जहां पर कि मेरा मकान था, तो मैं क्या देखता हूं कि, 'वाक़ई मेरे घर का कुछ भी पता-निशान बाक़ी नहीं बचा है और उसकी जगह पर एक निहायत आलीशान मसजिद बनरही है, काम निहायतसर-गरमी के साथ ज़ारी है और कईसौ मज़दूर काम कर रहे हैं! यहां पर मेरी सवाना-उम्री के पढ़ने वाले दोस्तों को इतना और भी समझ लेना चाहिए कि सिर्फ़ एक मेरे ही मकान को बर्बादकर यह मसजिद नहीं बनाई जारही थी, बल्कि इसके पेट में बीसों मकानात समा गए थे!

ख़ैर, कुछ देर तक मैं उस मसजिद के हर चहार तरफ़ चक्कर लगाता रहा फिर पच्चीस डंडे सीढ़ियां चढ़ कर मसजिद के सदर फाटकपर पहुंचा। गो, अभी उस मसजिद की बिलकुल तयारी में बसों का काम बाक़ी था, लेकिन उसका पहिला दर्जा बिलकुल बन चुका था। सहन में सङ्गमरमर व स्याहमूसे का फ़र्श बिछाया गया था और मसजिद के बीच का हिस्सा, जहांपर कि कुरान

---

(१) दूसरे हिस्से का दसवां बयान देखो।

शरीफ़ रखने की चौकी रक्खी हुई थी, बिलकुल सङ्गमरमर से बनाया गया था। वह रोज़, जिसरोज़ का बयान मैं कर रहा हूं, जुम्मे का था, और दो पहर का वक़्त क़रीब था; चुनांचे मुसलमान भाइयों की भीड़ कसरत से हो रही थी। ख़ैर, मैं भी अपने जोड़े को एक किनारे रख और वज़ू करके नमाज़ पढ़ने में मशग़ूल हुआ।

कबतक मैं खुदाबन्दकरीम की इबादत में मशग़ूल रहा, यह तो अब मुझे याद नहीं है, लेकिन जब मैं नमाज़ से फ़ारिग हुआ तो मेरी जानिब एक सिन रसीदा जवान ने मुखातिब हो कर यों पूछा,—"क्या आप इसी लखनऊ शहर में ही तशरीफ़ रखते हैं?"

उस अनजान जवान की बातें सुनकर मैंने उससे अपना असली हाल कहना मुनासिब न समझा और झूठमूठ यों कहा,—"जी, मैं देहली का रहने वाला हूं।"

उस जवान ने कहा,—"आप सिर्फ़ तफ़रीहन यहां तशरीफ़ लाए हैं, या कोई कार ज़रूरी है?"

मैंने कहा,—"जी, ऐसा तो कोई ज़रूरी काम नहीं है, लेकिन चूंकि एक जगह बराबर रहते-रहते जब इन्सान की तबीयत घबराने लगती है, तो वह लाचार हो कर सफ़र का कस्द करता है; यही वजह है कि मैं वास्ते दिलबहलाव के यहां आया हुआ हूं।"

उसने कहा,—"आप पहिले पहिल यहां आए हैं, या इसके क़बल और भी कभी आए थे?"

मैं,—"जी, मैं कई मर्तबा आचुका हूं। गो, देहली शहर भी एक अज़ीब लुत्फ़ की जगह है, लेकिन जब कभी मेरा दिल वहांसे ऊब जाता है तो मैं अपने दिलबहलाव के लिए लखनऊ को ही ग़नीमत समझता हूं। मैंने हिन्दुस्तान के बड़े बड़े शहरों की सैरें की हैं, लेकिन यह लखनऊ शहर भी एक ऐसी दिल्लगी की जगह है कि जो शायद अपना सरे ज़मीन पर सानी नहीं रखती।"

वह, "आप यहां पर कहां ठहरे हुए हैं?"

उस जवान की इस बात का भी जवाब मैंने झूठमूठ यों दिया कि,—"मैं यहीं पर एक सरा में ठहरा हुआ हूं।"

यह सुनकर उसने बड़े तपाक के साथ मेरा हाथ थाम लिया और मुस्कुराकर कहा,—"अय, वल्लाह! मेरे मौजूद रहते, आप सरा में नहीं जाने पावेंगे! गो, मेरा ग़रीबख़ाना इस क़ाबिल नहीं है कि वहां पर आपके मुबारिक क़दम जासकें, लेकिन यह बात मैं ज़ोर देकर कह सकता हूं कि सरा के बनिस्बत बन्दे के यहां कुछ न कुछ आराम आप ज़रूर पायेंगे।"

उस अजनबी जवान की ऐसी मिलनसारी की बातें सुनकर मैंने उसका शुक्रिया अदा किया, और बड़ी नर्मी के साथ यों कहा,—"जनाब-मन-सलामत, मैं आपका निहायत शुकुर गुज़ार हुआ कि आपने, बग़ैर जान पहिचान के भी, मुझ नाचीज़ मुसाफ़िर पर इतनी मिहर्बानी ज़ाहिर की, लेकिन इस अम्र में मैं आपसे माफ़ी चाहता हूं; वजह इसकी यह है कि मैं दो हफ्ते से यहां मुक़ीम हूं और दो हा एक रोज़ में यहां से देहली वापिस भी जाया चाहता हूं; ऐसी हालत में मैं आपको ज़ियादा तकलीफ़ देना मुनासिब नहीं समझता।"

यह सुनकर उसने बड़े जोश के साथ यों कहा,—"लाहौल विलाकूवत! अय जनाब, यह आप क्या फ़र्माने लगे! वल्लाह, यह सरासर इन्सानियत के बईद है कि आप एक शरीफ़ शख़्स होकर यहां पर एक महज़ मामूली सरा में पड़े रहें और इस बात को जानकर भी मैं चुपका होजाऊं! भला, यह कौन सी इन्सानियत है!"

मैंने बड़ी आजिज़ी के साथ कहा,—"बेशक आपकी शराफ़त की तारीफ़ जहांतक कीजाय, थोड़ी होगी; लेकिन फ़िलहाल मैं माफ़ी चाहता हूं; हां, आइन्दा जब मैं यहां आऊंगा, तो ज़रूर आपका मिहमान बनूंगा।"

यह सुनकर उसने मेरा हाथ थामलिया और बड़े इख़लाक के साथ कहा,—"ख़ैर, बिहतर है; जब कि आप मेरी बातें मंज़ूर ही नहीं करते तब फिर लाचारी है; लेकिन ताहम इस वक्त मैं आपको

न छोड़ूंगा और अपने यहां लेजाऊंगा। वहां चलकर आज आपको मेरी दावत क़बूल करनी पड़ेगी, इसके बाद फिर आप अपने डेरे पर जाने पाएंगे।"

नाज़रीन सोच सकते हैं कि ऐसी हालत में फिर मैं क्या कर सकता था! गो, मैंने उस अजीब शख़्स से हरचन्द अपना पीछा छुड़ाना चाहा, लेकिन सब बेकार हुआ, और लाचार होकर मुझे उसके साथ जाना पड़ा।

ग़रज़, हम दोनों मसजिद से बाहर हुए और एक तरफ़ को, जिस तरफ़ कि वह अजनबी जा रहा था, जाने लगे। यौंही कई बाज़ारों, सड़कों, और गलियों में घूमते हुए हमलोग एक निहायत आरास्ता मकान में दाख़िल हुए। उस अजनबी जवान ने उस मकान को अपना बतलाया और मुझे घर के अन्दर एक कमरे में लेजाकर ज़बरदस्ती मसनद पर बिठा दिया। उस कमरे में मेरे और उसके सिवा तीसरा कोई न था, इसलिये उसने ऐसी मज़ाक़ की गुफ्तगू शुरू की कि मेरा दिल खुश होगया और मैंने यह बात बख़ूबी जानली कि यह शख़्स बड़ी ख़ूबी का आदमी है!

यौंही तरह तरह की बातों में उसने मुझे ऐसा उलझाया कि यह ज़रा भी न मालूम पड़ा कि दिन किधर ग़ायब होगया!

अंधेरा होने के पेश्तर ही एक ख़िदमतगार आकर शमादान रौशन कर गया था।

कुछ देर के बाद उस जवान ने मुझसे यों कहा,—"दोस्त, अगर फ़ारिग़ वग़ैरह होने की ज़रूरत हो तो उसका इन्तज़ाम किया जाय।"

मैंने कहा,—"हां, अगर ऐसा हो तो बिहतर होगा।"

वह बोला,—"लिल्लाह अब ज़ियादा तकल्लुफ़ को जगह न दीजि और मेरे साथ बिलकुल सादगी का बरताव रखिए; क्योंकि मैं एक सीधा सादा और रास्त परस्त आदमी हूं, इसलिये चुनाचुनी

या लगावट की बातों से मुझे सख़्त नफ़रत है।"

इसका जवाब मैं कुछ दिया ही चाहता था कि वह जवान चट कमरे से बाहर चला गया और थोड़ी देर के बाद एक ख़िदमतगार आकर मुझे दूसरी कोठरी मे लेगया। उस कोठरी में एक लम्बी-चौड़ी चौकी बिछी हुई थी, जिस पर गुदीला फर्श बिछा हुआ था इधर उधर कई कुर्सियां भी क़रीने से रक्खी हुई थीं और छत के कड़ी से लटकती हुई एक उम्दा क़न्दील रौशन था।

उस कोठरी में मुझे लाकर उस ख़िदमतगार ने यों कहा,—"अब आप अपने ज़रूरियात के कामों से इस (बगल की एक कोठरी की तरफ़ हाथ का इशारा करके) कोठरी के अन्दर जाकर फ़ुर्सत पालीजिए। वहाँ पर ज़रूरियात की सभी चीजें मुहैया हैं, लेकिन फिर भी अगर आपको किसी चीज़ की दरकार हो तो उसी कोठरी में कोने की तरफ़ तिपाई पर रक्खी हुई घण्टी बजा दीजियेगा, तो मैं फ़ौरन हाज़िर होजाऊंगा।"

उस शऊरदार ख़िदमतगार की बातें सुनकर मैंने उससे पूछा,—"तुम्हारा नाम क्या है?"

उसने कहा,—"जी, मेरा नाम अख़्तर है।"

मैंने फिर पूछा,—"तुम्हारे मालिक का इस्मशरीफ़ क्या है?"

इस पर उसने यह जवाब दिया कि,—"मैं, कई रोज़ हुए, कि, यहां पर बहाल हुआ हूं, इस लिये मुझे अभी तक यह नहीं मालूम हुआ है कि मेरे आक़ा का नाम क्या है!"

मैंने फिर पूछा,—"ख़ैर, यह तो बतलाओ कि यह जगह, जिसमें कि तुम्हारे मालिक का यह मकान मौजूद है, किस नाम से मशहूर है?"

उसने कहा,—"जी, मैं देहात का रहनेवाला हूँ, और यहां पर मुझे आए एक हफ़्ते से ज़ियादा नहीं हुआ है; इसलिये अभी तक मैं इस मुहल्ले के नाम से बिलकुल नावाकिफ़ हूं।"

सातवां बयान।

इतना कहकर वह फ़ौरन उस कोठरी से बाहर होगया, और मैं उसकी बतलाई हुई दूसरी कोठरी का दरवाज़ा खोलकर उसके अन्दर गया।

वह कोठरी भी,—गो, छोटी थी, लेकिन बहुत ही साफ़, सुथरी और ज़रूरियात की कुल चीज़ों से आरास्ता थी। एक तरफ़ तिपाई पर रक्खा हुआ शमादान भी जल रहा था।

यह सब देखकर मैंने दिलही दिल में यह बात समझ ली कि यह शख़्स कोई अमीरज़ादा है और दिल इसका बहुत ही ऊंचा है; तबतो मुझ-सरीखे एक बेजान-पहिचान को अपने साथ लाकर इस तरह की मिहमानदारी कर रहा है।

ख़ैर, मैंने कपड़े उतारकर एक तरफ़ तिपाई पर रख दिए और उस कोठरी के बग़लवाली एक और कोठरी में चला गया। कुछ देर के बाद जब मैं उस कोठरी से वापस आया और हाथ-मुंह धोने के बाद अपने कपड़े बदलने के लिए उस तिपाई की तरफ़ बढ़ा, जिसपर कि मेरे कपड़े रक्खे हुए थे,—कि इतने ही में मेरे पैर के पास एक मुड़ा हुआ काग़ज़ आ गिरा! अगर वह काग़ज़ मेरे पैर में न लगा होता तो मुझे उसकी कुछ ख़बर ही न होती, लेकिन जबकि वह मेरे पैर में लगकर ज़मीन में गिरा तो मेरा ख़याल उसकी तरफ़ खिंचगया और चट उसे मैंने उठा लिया। इसके बाद मैंने कोठरी की छत की जानिब इसलिये निगाह उठाई कि यह जानूं कि यह काग़ज़ कहां से आगिरा है! लेकिन नाज़रीन! मेरी निगाहों ने उस वक़्त जो कुछ देखा, उसका हाल सुनिए,—

वह कोठरी, जिसमें कि मैं उस वक़्त मौजूद था, क़रीब आठ हाथ के ऊंची रही होगी। उसके एक जानिब एक छोटी सी खिड़की छत की सतह से मिली हुई बनी हुई थी, जिस में से एक सिर बाहर निकला हुआ था ! गो, उस चेहरे का ज़ियादातर

हिस्सा बोरक़े से ढका हुआ था. लेकिन फिर भी जो कुछ मैंने देखा, वह मुझे ताज्जुब के दरिया में गर्क़ कर देने के लिए क़ाफ़ी था !

वह चेहरा किसी निहायत हसीन और कमसिन नाज़नी का था, और मुझे ऐसा मालूम होता था कि, 'शायद यह मुखड़ा कभी मेरी नज़रों के सामने से गुज़रा हो !' लेकिन कब, या कहां, इस बातकी याद उस वक़्त मुझे ज़रा भी न आई !

अल्लाह, अल्लाह ! जब कि, उस परी पैकर ने एक लहज़े के लिए अपने चेहरे से बोरक़ा हटा कर मुझसे चार आखें की थीं, उस वक़्त मेरे दिलपर क्या गुजरी थी, इसका अन्दाज़ा मैं नहीं कर सका !!!

क़िस्साकोताह, बिजली चमक कर, गोया, बादल में जा छिपी ! यानी उस परी ने फ़ौरन अपने रुख़सार को बोरक़े के अन्दर छिपा लिया और बहुत ही धीरे से सिर्फ़ इतना कहा,—

" इस कागज़ को पढ़ो ।"

अलक़िस्सा, फिर वह मुखड़ा खिड़की के अन्दर गायब हो गया और वह धीरे से बंद होगई ! इसके बाद मैंने पेश्तर अपने कपड़े पहिने, और फिर शमादान की रोशनी में उस कागज़ को खोलकर पढ़ा ।

नाज़रीन, उस पर्चे में जो कुछ लिखा हुआ था, वह मेरे कलेजे की धज्जियां उड़ा देने के लिए क़ाफ़ी था ! अगर आपका दिल चाहे, तो उस पर्चे की नक़ल देखलीजिए; वह यही है,—

" दोस्त यूसुफ़ ! बाद आदाब के एक नाक़िस ख़बर तुम्हें सुनानी पड़ी ! बड़े अफ़सोस का मुकाम है कि तुम बिलफ़ेल फिर एक बला में गिरफ़्तार होगए हो; लेकिन ख़ैर, कुछ परवाह नहीं ! तुम ज़रा अपने दिल को मज़बूत बनाए रहना और उसे अपने कब्ज़े में रखना; वर न, तुम्हारे जान की ख़ैर नहीं ! तुम बराबर अपने तईं वैसा ही झलकाना,—गोया, तुम कुछ जानते ही न होवो ! खाना तो तुम शौक से खाना, लेकिन ख़बरदार शराब हरगिज

न पीना; वरन क़यामत बरपा हो जायगी! तुम इस बात पर यक़ीन रखना कि तुम्हारा मददगार बिल्कुल तुम्हारे क़रीब मौजूद है। रात के सन्नाटे में, अगर खुदा ने चाहा, तो, तुम इस क़ैद से आज़ाद कर दिए जाओगे। इस रुक्के को पढ़ने के बाद फ़ौरन जला डालो और इसकी राख पनाले में बहादो; बस, फ़क़त!"

आह, खुदावन्दकरीम! यह क्या बात है! यह कौन सा मुकाम है! मैं कहां आ फंसा हूं! यह मीठी-मीठी बातें करके मुझे ज़बरन ले आनेवाला जवान कौनहै! इसके साथ मेरी क्या दुश्मनी है और यह मेरे साथ क्या सलूक किया चाहता है! अफ़सोस, अफ़सोस! बदक़िस्मती ने अभीतक मेरा साथ नहीं छोड़ा है और उस पाक परवरदिगार की मह्रे नज़र अभी मुझसे शायद बहुत दूर है! मगर यह तो अजब तमाशा है, कि जहां मैं जाता हूं, वहीं फ़ौरन पहचान लिया जाता हूं! अल्लाह! यह नाज़नी—यह खूबसूरत और कमसिन नाज़नी, कौन है, जिसने मुझे फ़ौरन पहचानलिया और मेरे नाम रुक्का लिखा! यह पहिले की देखी हुई सी मालूम देती है, लेकिन मैंने इसे कब और कहां देखा, इस बात की मुझे इस वक़्त मुतलक़ याद नहीं है! यह कौन नाज़नी है,—यह नेकबख़्त और रहमदिल कौनसी औरत है, जो मेरे साथ बिलावजह हद्द दर्जे की नेकी करने के लिये आमादा है! यह दर असल कौन है, और क्यों मेरे साथ नेकी किया चाहती है! मगर यह तो इसने कुछ लिखा ही नहीं कि, 'यह कौनसा मुकाम है, मैं किस शख़्स के पाले पड़गया हूं और मेरे सर पर कौनसी बला सवार हुआ चाहती है!!!'

लेकिन, नाज़रीन! इन बातों पर ग़ौर करने में मैंने ज़ियादा वक़्त न लगाया। फ़ौरन उस ख़त को जला डाला और उसकी राख को पनाले में बहा दिया। फिर चटपट कपड़े पहिनकर मैं तयार होगया। मैं मुसीबतों के झेलने का तो आदी हो ही गया था,—बस, फ़ौरन मैंने अपने दिल को मज़बूत किया और इस नए तमाशे के

देखने, या नई बला को गले लगाने के लिये तयार होगया !

इसके बाद, मैंने ज्योंही उस कोठरी से निकल कर उस (दूसरी) कोठरी में क़दम रक्खा,— जिसमें कि वह चौकी बिछी हुई थी, या जिसमें उस ख़िद्मतगार के साथ मेरी बातें हुई थीं,— वह मेरा नया मिहरबान मुलाक़ाती मेरे सामने आता हुआ नज़र आया; क्योंकि वह भी उसी वक्त उस कोठरी में आ पहुंचा था।

उसने मेरी तरफ़ देख और मुस्कुराकर कहा,—" आह, दोस्त, तुमने बड़ी देर लगाई ! तुम क्या अफ़ीम खाते हो ? "

मैंने अपने दिल की उलझन दिल के अन्दर ही दबाली और उसी तरह बेफ़िक्री के साथ मुस्कुराकर कहा,—" जी नहीं, अफ़ियून तो मैं नहीं खाता,—बल्कि हरएक नशे से पर्हेज़ रखता हूं,—लेकिन हां, मैं इतना सुस्त और आलसी हूं कि मुझे हर एक काम में ज़रूरत से ज़ियादह देर लग जाया करती है। ख़ैर, इसके लिये मैं आपसे माफ़ी चाहता हूं और – – – "

उस शख़्स ने हँसकर मेरा हाथ पकड़ लिया और कहा,— " मआज़ अल्लाह; भई ! इस तकल्लुफ़ाना तरीक़े को छोड़ो और दोस्ताना क़रीना अख़्तियार करो; क्योंकि मैं झूठी चापलूसी और ज़ाहिरदारी से सख़्त नफ़रत करता हूं और सादगी पसन्द करता हूं। मैं अपनी तबीयत का सच्चा हाल अभी कुछ ही देर पहिले तुम पर ज़ाहिर भी कर चुका हूं; पस, अब तो यही दिल चाहता है कि तर्फ़ैन की रुकावटों को दूर करके हम-तुम सच्चे दोस्त बनजायें और तर्फ़ैन की खिंचावटों का पर्दा हटादें। "

नाज़रीन ! उसकी इस ढंग की बातें सुनकर मैं दिल ही दिल में यह सोचने लगा कि, ' यह क्या बात है ? यह अजनबी शख़्स तो इस तरह की घुलावट की बातें कर के मेरे दिल को अपनी तरफ़ खैंच रहा है, मगर वह ख़त लिखने वाली कुछ और ही इशारा कर रही है ? यह बात क्या है ? ' मगर ख़ैर. मैं दिलही

दिल में तो ऊपर लिखीगई बातों पर ग़ौर करता रहा, लेकिन उस अजनबी जवान की बातों का जवाब मैंने फ़ौरन दिया,—

मैंने कहा,—" जनाबमन ! आप तो बड़ी ख़ूबी के आदमी हैं ! बेशक, आपसे मिलकर मैं निहायत खुश हुआ और आपकी लामिसाल ख़ातिरदारी ने तो मुझे गोया हमेशे के लिये अपना जरख़रीद ग़ुलाम बना लिया ! मैं ताज़ीस्त आपको न भूलूंगा और हमेशा दिलही दिल में आपको याद किया करूंगा।"

मेरी बातों को सुन उसने एक क़हक़हा लगाया और कहा,—"अजी, लाहौल भी पढ़ो ! मगर ख़ैर, अब अपनी इन फ़ज़ूल और ख़ुशामदी बातों को तय कर रक्खो और मेरे साथ बिल्कुल बेतकल्लुफ़ाना बरताव शुरू करदो। अच्छा, ख़ैर, अब चलो, खाना खाएं, साथही साथ बातचीत भी होती जायगी।"

यों कहकर वह जवान मुझे एक और कमरे में ले गया। वहां पर एक मेज़पर खाना चुना हुआ था और आमने-सामने दो कुर्सियां रक्खी हुई थीं। वह कमरा भी निहायत तबीयतदारी के साथ आरास्ता किया हुआ था और एक तरफ़ एक लम्बे-चौड़े तख़्त के ऊपर निहायत साफ़ वो सुथरा फ़र्श बिछा हुआ था। उस फ़र्श पर क़रीने से पानदान, हुक्का, उगालदान, सितार, बायां, और गंजीफ़ा रक्खे हुए थे और एक तरफ़ छोटीसी मसनद भी लगी हुई थी, जिसके अगल-बगल कई तकिए क़िते से रक्खे हुए थे। उसी तख़्त पर एक तरफ़ एक निहायत नफ़ीस पलङ्ग भी बिछा हुआ था। गरज़ यह कि वह कमरा, गो, बहुत बड़ा न था, लेकिन आरास्ता करने वाले की तबीयतदारी का नमूना ज़रूर था।

ये सब बातें मैंने एक लहज़े में ही देखलीं। फिर हम-दोनों आमने-सामने की कुर्सियों पर बैठ गए और खाना खाने लगे।

नाज़रीन, यह बात सुनकर ताज्जुब करेंगे, और है भी यह अचम्भे ही की बात; लेकिन जो बात सच है, उसे मैं हर्गिज़ न

छिपाऊंगा। बात यह है कि उस अनजान नाज़नी के ख़त की लिखावट पढ़ने से, गो, उस वक़्त मेरा दिल डामांडोल हो रहा था, लेकिन फिर भी मैं निहायत शऊरदारी के साथ उससे बातें करता और खाना खाता जाता था। खाना भी मैंने खूब पेट भर कर खाया और अपने दिल को यह कहकर समझा दिया कि 'पेशआनी है वही, जो कुछ कि पेशानी में है;' पस, खाने से किनाराकशी करना अक़ल के बईद है।'

गरज़ यह कि देरतक हमलोग खाना खाते रहे और दिल्लगी-मज़ाक का सिलसिला बराबर ज़ारी रहा। बाद इसके, उस मेज़ पर से खाने के बर्तन हटा दिये गए और उनकी जगह पर शराब के जाम, प्याले, गजक की तश्तरियां और ताज़े व उम्दा मेवे की रकाबियां चुनदी गईं। चुननेवाला वही ख़िदमतगार अख़तर था।

फिर तो उस जवान ने अपने हाथ से प्याला भरकर मेरे आगे हाथ बढ़ाया और कहा,—"लो, दोस्त! अब खुदा के वास्ते दो-चार प्याले भी ख़ाली करडालो; जिसमें तकल्लुफ़ का पर्दा उठ जाए और ज़िन्दगी का लुत्फ़ नज़र आए।"

मैंने इन्सानियत के ख़याल से'आदाबअर्ज़' करके उसके हाथ से प्याला लेलिया और उसे उसी (जवान) की जानिब बढ़ाकर और मेज़पर रखकर यों कहा,—"दोस्तमन! आप शौक से इसे नोश फ़र्माइए और बन्दे को मांफ़ कीजिए! क्योंकि यह (मैं) इस मूज़ी शराब से बिल्कुल परहेज़ रखता है!"

मेरी बातें सुनकर उसने एक क़हक़हा लगाया और दुबारा मेरी तरफ़ 'प्याला' बढ़ाकर कहा,—"लाहौलबिलाकूवत! अजी म्यां, यह वह चीज़ है, कि जिसे बड़े बड़े ईमानदार क़ाज़ी भी चुपचाप उड़ा जाया करते हैं! पस, मैं तो उसे इन्सान ही नहीं समझता, जो ऐसी नायाब चीज़ से परहेज़ करे!"

उसकी ऐसी बातें सुनकर जो किसी सच्चे मुसलमान के मुंह

से हर्गिज़ न निकलेंगी, मैंने कहा,—"जनाब, जिन्हें आपने ईमानदार क़ाज़ी बतलाया, वे महज़ बेईमान क़ाफ़िर और मक्कार होंगे, जो दीन इसलामियां पर बट्टा लगाते और कुरानशरीफ़ के हुक्म की तौहीन कर शराबख़ोरी करते होंगे। मगर ख़ैर, आप शौक़ से नोश फ़र्मांए और मुझे मांफ़ करें; क्योंकि मैं तो इसके छूने से भी परहेज़ करता हूं।"

मेरी बातें सुनकर उसने ज़रा मुंह बना लिया और तनज़ के साथ कहा,—"अल्लाह! आप तो एक ख़ासे 'पीरमुर्शद' नज़र आते हैं?"

मैंने कहा,—"यह तो आप गोया मुझे बनाते हैं!"

वह बोला,—"अजी, क्यों, बनानेवाला तो ख़ुदावन्दक़रीम है?"

मैं कहने लगा,—"वल्लाह, क्या ही मौज़ूं जवाब आपने दिया!"

वह,—"तो, क्यों दोस्त! वाक़ई, तुम शराब न पीओगे?"

मैं,—"जी नहीं, मैं इससे परहेज़ रखता हूं। आपको शायद ख़याल होगा कि अभी कुछदेर पहिले, उस कोठरी में, जब आपने मुझे अफ़ीमची बतलाया था, तो, मैंने यह ज़रूर कहा था कि, 'मैं किसी नशे से सरोकार नहीं रखता'।"

वह,—"आह, मैंने वे बातें बिल्कुल नहीं सुनीं थीं!"

नाज़रीन यह बात ज़रूर जानते होंगे कि मैं भी शराब से परहेज़ नहीं रखता था और शाही महलसरा के अन्दर तो खूब ही उड़ाता था; लेकिन उस अजीब अजनबी नाज़नी के रुक्के का ख़याल मेरे दिल में बना हुआ था, इसलिये मैंने शराब से अपने तईं बिल्कुल बचाया। हां, यह ठीक है कि अगर उस परीपैकर का ख़त मुझे न मिला होता तो मैं हर्गिज़ शराबख़ोरी से इन्कार न करता और शायद ज़रूरत से ज़ियादह पीजाता!

ख़ैर, फिर तो उस जवान ने भी शराब न पीई। गरज़ फिर तो मेवे का सफ़ाया किया गया और बाद दस्तरख़ान से उठकर हमदोनों फ़र्शपर जा बैठे उस जवान न डब्बे में से पान की गिलौरियां

निकालकर खुद खाईं और मुझे भी दीं; फिर मेरी तरफ़ हुक़्क़ा सरकाकर कहा,—" अब यह बतलाओ, यार ! कि क्या तुम कुछ गाना-बजाना भी जानते हो ? "

मैंने हुक़्क़े के नल को उसके मुंह की तरफ़ फेर कर कहा,—" जी नहीं, इस फ़न में मैं बिल्कुल कोरा हूं । "

यह सुन और हिक़ारत की नज़र से मेरी तरफ देखकर वह बोला,—" अफ़सोस, अफ़सोस; म्यां देहलवी ! मैं समझता हूं कि तुम्हारी ज़िन्दगी ही बेकार है ! ! ! "

मैंने कहा,—"क्या करूं, हज़रत ! मैं ऐसा बदनसीब हूं कि आप सरीखे तबीयतदारों की सोहबत मुझे बहुत कम नसीब होती है !"

उसने हुक़्क़े के दो-चार कश लगाकर कहा,—" क्या तुम हुक़्क़ा भी नहीं पीते ! "

मैंने कहा,—"जी, पेश्तर तो मैं इसका बड़ा आदी था, लेकिन कई बरस का अर्सा हुआ कि मुझे दमा का आरज़ा हो गया था। बस, तभी से हकीमों के मना करने से मैं इस मुंह लगी माशूका से भी कनारा कर बैठा !"

वह,—"ख़ूब ! ख़ैर मैं तुम्हें ज़रा सितार सुनाऊं ! "

यों कहकर उस जवान ने दो तकिए मेरी तरफ़ सरका दिए और बग़ल में रक्खे हुए सितार को उठाकर मिलाना शुरू किया। मैं तकिए का ढासना लगाकर बेतकल्लुफ़ी के साथ ज़रा लेट गया और वह जवान सितार मिलाकर 'बिरहनी' की एक गत बजाने लगा। गो, वह शख़्स अच्छा सितार बजाता था, लेकिन मैं उससे अच्छा—बल्कि बहुतही अच्छा बजाना जानता हूं, इस लिये मेरा दिल उसके बजाने में न लगा; मगर फिर भी मैं दिल खोलकर और—'माशा अल्लाह, क्या बात है, क्या ख़ूब—' वग़ैरह-वग़ैरह तारीफ़ें करने से बाज़ न आया ! जो लोग गाना-बजाना जानते हैं, उनकी यह ख़ासियत है कि गाने बजाने को देखकर वे देरतक ख़ामाश

नहीं रहते और खुद भी कुछ न कुछ अलापने लगजाते हैं; लेकिन मैं अपनी तबीयत को बिल्कुल रोके रहा, बल्कि उस वक्त मेरा दिलही इस क़ाबिल न था कि वह गाने-बजाने की तरफ़ रुजू होता!

ख़ैर, एक घन्टे तक वह बड़ी उमङ्ग के साथ सितार बजाता रहा, इसके बाद उसने तारों को उतार कर उसे ठिकाने से रख दिया और कहा,—"वल्लाह, तुम तो सरे शामही से पिनक लेने लगगए!"

दरअसल मैं नींद आने का नख़रा करके ऊंघने लगगया था; चुनांचे सम्हलकर बैठ गया और बोला,—"वाकई, दोस्त! आपने ऐसी उम्दा गत बजाई कि दिल ने ख़ूबही आराम पाया; और यह एक ख़ास बात है कि जब दिल को चैन आता है तो बेचारी नींद भी माशूका बनकर छेड़खानी करने लगजाती है।"

यह सुनकर वह खड़ा होगया और वहीं पर लगी हुई घड़ी की तरफ़ देखकर बोला,—"वाकई, दोस्त! रात भी आधी के क़रीब पहुंचा चाहती है!"

यह सुनकर मैंने रुख़सत चाही, जिसे सुन कर वह बेतहाशा हँस पड़ा और बोला,—"मआज़ अल्लाह! इस आधीरात के सन्नाटे में कहां मारे मारे फिरोगे! सुबह के वक़्त डेरे पर चले जाना। ख़ैर, तुम इस वक्त इसी पलङ्ग पर आराम करो। यहीं तिपाई पर पानी वग़ैरह रक्खा हुआ है (अंगुली से दिखला कर) अगर ज़रूरत पड़े तो पीलेना और आराम के साथ सोना। अब सुबह मैं तुमसे मिलूंगा।"

यों कहकर उसने शमादान पर हरा गिलाफ डालदिया, जिससे कमरे में एक तरह से अंधेरा होगया। फिर वह 'ख़ुदा हाफ़िज़' कह कर कमरे से बाहर चलागया और मैं पलङ्ग पर लेटकर तरह तरह के ख़यालों में डूब गया!

आठवां बयान।

मैं लेटा लेटा दिलही दिल में यह सोचने लगा था कि,—'अब मुझे क्या करना चाहिए?' अगर मैं नींद में ग़ाफ़िल हो जाता हूं,—तब तो उस आनेवाली मुसीबत से बचने का कोई बन्दोबस्त न कर सकूंगा; और अगर जागता रहता हूं, तो मुमकिन है कि शायद उन वारों से अपने तईं किसी क़दर बचा सकूंगा, जो मुझपर होनेवाले हैं; बक़ौल शख़्से कि, 'सोया और मुर्दा बराबर होता है; और जागता हर बलाओं से बचा रहता है।' चुनांचे, अपने दिल में मैंने यह पक्का इरादा कर लिया कि आज की शब को योंही गुज़ार दूंगा और नींद को अपने पास भी न फटकने दूंगा।

इसी तरह के ख़यालों में मैं उलझा हुआ था कि घड़ी ने बारह बजादिए। ज्योंही गजर बजने की आवाज़ मेरे कानों में पहुंची, मैं फ़ौरन पलंगपर उठबैठा और बग़ल में तकिए का ढासना लगाकर आराम करने लगा। उस वक़्त मेरे कान खड़े हो हरतरह की आहट लेने के लिए तैयार होगए थे, लेकिन चारोंतरफ़ सन्नाटा फैला हुआ था, और किसी क़िस्म का खटका-वग़ैरह नहीं सुनाई देता था। मुझे यही जान पड़ता था, गोया घर के सभी आदमी सोगए हैं और किसी के भी जागते रहने की आहट नहीं मालूम देरही है!

इतने ही में ज्योंही एक बजा, मेरे कमरे में एक बोरक़ेवाली आई और मेरे पलंग के क़रीब आकर खड़ी होगई। उसे देखतेही मैं चौकन्ना होगया और पलंगपर तनकर बैठ गया। मुझे जागता हुआ देखकर उस बोरक़ेवाली ने मेरे कान के पास मुंह लाकर बहुत ही आहिस्ते से कहा,—"मैं तुम्हारी वही ख़ैरख़्वाह औरत हूं, जिसने शाम को तुम्हारे पास रुक्का फेंककर तुम्हें ख़बरदार करदिया था। लिहाज़ा अगर तुम मुझपर भरोसा रखते हो तो

फ़ौरन उठ खड़े होवो, और मेरे हमराह चलो।"

नाज़रीन! उस अजीब औरत को, गो, मैं नहीं जानता था, लेकिन वह मुझे ज़रूर ही जानती होगी; तब तो उस रुक्क़े में उसने मेरा नाम तक खोलकर लिख दिया था! ऐसा मैं ऊपर लिखभी आया हूं, कि शायद इस औरत को मैने कहीं देखा है, लेकिन कहां और कब देखा है, यह बात बहुत कुछ ग़ौर करने पर भी मुझे याद न आई; लेकिन फिरभी मुझे उसपर ज़रा शक न हुआ और मैं उसके साथ हो लिया।

अब यहां पर पेश्तर मैं इस मकान के नक्शे का कुछ बयान करूंगा, इसके बाद वह दास्तान सुनाऊंगा, जो कि उस औरत के साथ रवाना होने के बाद की है।

यह बात मैं लिख आया हूं कि मुझे मसजिद में से एक जवान ज़बर्दस्ती अपने हमराह अपने मकान पर ले आया था। उस जवान की उम्र मेरे खयाल से पैंतीस और चालीस के अन्दर थी। उसका बदन गोरा, चेहरा सुडौल, क़द लंबा, डाढ़ी ख़सख़सी, बाल कन्धे तक लटकते हुए और मूंछें ऊपर की तरफ़ उमेठी हुई थीं। उस ज़वान ने जिस मकान में लाकर मेरी तवाज़ह की थी, उस मकान का कुछ नक्शा पढ़नेवालों को समझलेना चाहिए, क्योंकि शायद कभी फिर भी यहां आने का मौक़ा आजाय!

वह मकान एक चौड़ी गली के अन्दर था। गली की जानिब सात दरवाज़े थे, जिनमें बीचवाला दरवाज़ा तो उस मकान के अन्दर जाने का गोया सदर रास्ता था, और उसके अगल-बग़ल जो तीन-तीन दर्वाज़े थे, वे गोया दोनो जानिब के दो कमरों के दर्वाज़े थे। उनमें से एक कमरे का हाल तो मैं पेश्तर लिखही आया हूं, जिसमें कि उस जवान ने मुझे लेजाकर मसनद पर बैठाया था। वह कमरा न बहुत बड़ा था, न बिलकुल छोटा। उसके तीन दर्वाज़े गली की जानिब, और तीन दर्वाज़े मकान के अन्दर की

तरफ़ थे। यह तो उस कमरे की लम्बाई का हाल हुआ। उसकी चौड़ाई की तरफ़ आमने-सामने एक-एक दर्वाज़े थे, जिनमें एक दर्वाज़ा तो सदरड्योढ़ी की तरफ़ था और उसके मुक़ाबिल का दूसरा दर्वाज़ा एक कोठरी का था। उस कमरे के ऊपर, अगल-बगल तीन-तीन, और आमने-सामने एक-एक खिड़कियां थीं, जिनमें चिलमनें पड़ी हुई थीं। इसके अलावे वह कमरा निहायत सूफ़ियाने ढंग से आरास्ता किया हुआ था। अब उस दूसरे कमरे की बाबत सुनिए, जो सदर ड्योढ़ी की दूसरी जानिब था। उसके बारे में यहांपर मैं सिर्फ़ इतनाही कह सकता हूं कि उसे मैंने अभी नहीं देखा था कि वह भीतर से कैसा है। अब ज़रा फिर ग़ौर के साथ देखिए,—जिस कमरे में पेश्तर लाकर मैं बैठाया गया था, उसके ठीक सामने का वह कमरा, जिसमें कि खाना खाया गया था, सात दर का था, यानी मकान के अन्दर की तरफ़ सात दरवाज़े थे,—उनमें बीच का दरवाज़ा सदर ड्योढ़ी के ठीक सामने पड़ता था। इस सात-दर-वाले कमरे के अन्दर दर्वाज़ों के मुकाबिल में सात आलमारियाँ बनी हुई थीं, और चौड़ाई की तरफ़ अग़ल-बग़ल दो कोठरियां थीं,—इससे यह साफ मालूम होता था कि वे आलमारियां गोया मकान का अख़ीर बतलाती थीं। उस कमरे में ऊपर की जानिब खिड़कियां नहीं थीं, यानी पहले कमरे के बनिस्बत इसकी पाटन कुछ नीची थी। अब कमरे के बाहर निकलकर अगर सहन में सदर रास्ते की तरफ मुंह करके खड़े होइए तो दायें और बायें पांच पांच दर्वाज़े दिखलाई देंगे, वे शायद कमरे या कोठरियां हों। उनमें से एक तरफ़ की एक कोठरी का हाल मैं पेश्तर लिख आया हूं, जिसमें कि मैं जरूरी कामों से फुर्सत पाने के लिये गया था, और जिसमें चौकी बिछी हुई थी। बस फिलफ़ैल नाज़रीन इस मकान के इतने ही हालात को याद रक्खें और अब आगे का तमाशा देखें।

ग़रज़ वह बोरक़ेवाली औरत कमरे से बाहर हुई, मैं भी उसके साथ ही साथ बाहर सहन में आया। बाहर सहन में ऐसा गहरा अँधेरा था कि वह बोरक़ेवाली मेरा हाथ पकड़कर एक तरफ़ को चली और कई क़दम चलने के बाद एक चौखट पार कर के सीढ़ियां चढ़ने लगी। करीब सोलह चक्करदार सीढ़ियों के तै करने के बाद मुझे वह एक ऐसी कोठरी में लेगई, जो उस कमरे के ठीक ऊपर थी, जिसमें कि मैं पेश्तर बैठाया गया था। खिड़की में चिलमन पड़ी हुई थी, उसमें आखें लगाकर जो कुछ मैंने देखा, उसका अजीब हाल सुनिए,—

मैंने क्या देखा कि, कमरे में मसनद के नीचे वही मालिक-मकान जवान बैठा हुआ है, जो मुझे मसजिद से ले आया था,—और उसके सामने सिर्फ़ एक हाथ के फ़ासले पर मेरी जानीदुश्मन कम्बख़्त आसमानी बैठी हुई है!!!

इस अजीब कैफ़ियत को देखकर मैंने अपनी साथिन बोरक़ेवाली से बहुत ही आहिस्ते से कहा,—"अल्लाह, यह क्या माजरा है?"

इसके जवाब में उसने भी बहुत ही धीरे से कहा,—"चुप रहो, चुपरहो और कान लगाकर ग़ौर के साथ इन दोनो की बातें सुनो। मुमकिन है कि इनकी बातें सुनने से बहुत से पोशीदा हालात तुम जान जाओगे। अभी मेरे जान, बातों का सिलसिला शुरू नहीं हुआ है, क्योंकि जैसे ही आसमानी इस मकान के अन्दर आई, वैसे ही मैं तुम्हें यहां ले आई हूं!"

ग़रज़ यह कि, मैं उस बोरक़ेवाली से कुछ और पूछा चाहता था कि इतने ही में आसमानी ने उस जवान से यों कहा,—"क्यों मियां लियाक़त हुसैन, इस वक़्त तुमने मुझे क्यों तलब किया है?"

लियाक़त हुसैन ने कहा,—"बी, आसमानी! एक हफ़्ते के क़रीब हुआ होगा कि, तुमने मुझे एक तस्वीर देकर इस बात की हिदायत की थी कि,—'इस सूरत के आदमी का नाम यूसुफ़ है,—

पस, वह अगर कभी तुम्हारी नज़रों के आगे आजाय तो उसे हरगिज न छोड़ना और जैसे हो सके, उसे अपने साथ यहां ले आना और मुझे फ़ौरन खबर देना;' चुनांचे वह शख्स आज इत्तिफ़ाक़ से मुझे तुम्हारी उस जुम्मामसजिद में मिल गया और मैं उसे अपने साथ यहां ले आया हूं। बस, तुम्हारी तलबी का यही सबब था। इस वक़्त वह शख्स मेरे मकान में मौजूद है और सामनेवाले कमरे में पड़ा सो रहा है।"

नाज़रीन! उस जवान की बातें सुनकर आसमानी फड़क उठी और बोली,—"अल्हम्द लिल्लाह! क्यों, लियाक़त हुसैन! भई, तुमने तो मुझे अच्छी खुशखबरी सुनाई! वाक़ई, इस खबर को सुनकर मैं निहायत खुश हुई। मगर खैर, इस बारे में मैं पीछे तुमसे बातें करूंगी; बिलफ़ेल, तुम यह बतलाओ कि उस मसजिद के बनकर तयार हो जाने में अब कितने रुपयों की ज़रूरत है?"

लियाक़त हुसैन ने कहा,—"मेरे अन्दाज़ से मसजिद की बिलकुल तयारी में कम से कम तीन लाख रुपए और चाहिएं।"

यह सुनकर आसमानी बिगड़ उठी और लहककर कहने लगी,—"अल्लाह, अल्लाह, अभी 'कम से कम तीनलाख रुपए और चाहिएं!' लेकिन ज़ियादह से ज़ियादह?"

लियाक़त हुसैन,—"ज़ियादह से ज़ियादह पांच लाख रुपए!"

यह सुनकर आसमानी और भी जल उठी और बोली,—"तुम्हारा सिर! क्या यही तुम्हारा तखमीना है। अय ग़ज़ब! अय अफ़सोस! अय तौबः तौबः!!! क्यों क्यों, तुमने तो पांच लाख रुपए में मसजिद बनकर तयार होजाने की बात कही थी, लेकिन छः लाख तो खर्च होगए, उस पर तुम और भी तीन-पांच लगाए हुए हो! ले, भला, अब इतने रुपए मैं कहां से लाऊं, क्योंकि बादशाह सलामत तो अब कुछ देते नज़र नहीं आते। तुम्हारे कहने के माफ़िक मैने पांच लाख रुपए लगाकर एक मसजिद मेरे नाम से

तयार करा देने की गुज़ारिश हज़रत सलामत से की थी, सो उन्होंने मुझपर मिहर्बानी करके पांच की एवज में छः दिए; लेकिन अभी तक तुम्हारा तख़मीना ही पूरा नहीं होता ! अगर मैं पेश्तर यह जानती होती कि तुम ऐसे आला दर्जे के मुन्तज़िम हो, तो हर्गिज़ यह काम तुम्हारे सुपुर्द न करती। अफ़सोस, अब मैं क्या करूं, कहांसे इतने रुपए लाऊं और क्योंकर मसजिद पूरी कराऊं !!!"

आसमानी की ये बातें सुनकर लियाक़त हुसैन ने ज़रा तुर्शी के साथ कहा,—"बी, आसमानी ! यह तो तुम सरासर ज़ुल्म करती हो, जो मुझे दर पर्दे चोर बनाती हो ! मैंने इतनी जांफ़िशानी उठाकर और अपना बहुतसा बेशक़ीमत वक़्त बर्बाद कर उस मसजिद को बनवा देना मंजूर किया था,—वह भी कब, जब, तुमने मेरी बहुत कुछ आर्ज़ू-मिन्नत की थी। मैं तुम्हारा रुपया खा नहीं गया हूं, एक एक कौड़ी का हिसाब मौजूद है; पस, जिस से दिल चाहे, उसकी जांच करा लो—और आइन्दे से यह काम किसी दूसरे ईमानदार शख़्स के सुपुर्द करो।

लियाक़त हुसैन की बातें सुनकर आसमानी और भी ताव-पेच खाकर कहने लगी,—"जी हां, ठीक ही तो है ! मैंने ही तो तुम्हारी आर्ज़ू-मिन्नत की थी और तुमने गोया बड़ी-बड़ी आर्ज़ू-मिन्नतों के बाद इस काम के अंजाम कर देने का बार अपने सर पर उठाया था ! मआज़ अल्लाह ! एक शख़्स तो वह होता है, कि जो पीठ-पीछे झूठ बोलता है; और एक बशर तुम हो कि जो मुंह-ब-मुंह दरोग़ कह रहे हो ! क्या उस वक़्त की याद इस वक़्त तुम्हें मुतलक़ नहीं है, जब कि शाहीदर्बार की तरफ़ से उस मुसव्विर 'यूसुफ़' के मकान के साथ ही साथ और भी बहुत से मकानात ख़रीद किए गए थे और मसजिद बनवाने के लिए उनकी खुदाई शुरू होगई थी ! क्या उस मौके पर तुमने अपनी बहिन और बेटी से बादशाह की ख़िदमत में किसी किस्म की सिफारिश या गुजारिश नहीं कराई

थी, या मुझसे मुलाक़ात हासिल करने की तमन्ना तुमने नहीं की थी'?"

नाज़रीन! आसमानी का रुख़ बदला हुआ देखकर काइयां और चालबाज़ लियाक़तहुसैन सम्हल गया और उसने अपनी बातों का ढङ्ग बदलते हुए यों कहा,—" आह, बी, आसमानी! तुम तो नाहक़ नाराज़ होने लगीं! मेरे कहने का यह मतलब न था कि---"

आसमानी,—(उसे रोककर) "ख़ैर, जो कुछ हुआ, वह हुआ, इन बातों को अब जाने दो और सुनो,-अब, जब कि उस मसजिद की बुनियाद डाली गई है, तो उसका अख़ीर करदेना बहुत लाज़िमी है; पस, मैं इस बारे में अब ज़ियादा हुज्जत नहीं किया चाहती और यह काम तुम्हारे ही हाथों से पूरा कराया चाहती हूं। जब से तुम्हारे साथ मेरी राह रस्म पैदा हुई है, तुम्हें मेरी आदतों या मिज़ाज का हाल कुछ न कुछ ज़रूर ही मालूम होगया होगा। सुनो, मेरी यह ख़ास आदत है कि मैं झूठ, फ़रेब, चापलूसी और ख़ुशामद वग़ैरह से सख़्त नफ़रत करती हूं, और सफ़ाई व सचाई की दिल से क़दर करती हूं। ख़ैर, जो कुछ हो, लेकिन मैं किसी न किसी तरह बादशाह से कह सुनकर इस मसजिद को तो ज़रूर ही पूरी कराऊंगी, और बहुत जल्द तुमको शाही दरबार से रुपए बरामद करलेने के लिए हुक्मनामा दिलवाऊंगी; मगर पेश्तर इसके, मेरा एक ख़ास काम है, जिसका अञ्जाम तुम्हें बहुत जल्द और निहायत ख़ूबसूरती के साथ कर देना होगा। (१) इस काम के अञ्जाम कर देने में तुम्हारी मिहनत बर्बाद न होगी और तुम्हारी मुट्ठी भरपूर गरम की जायगी।



(१) लियाक़त हुसैन और इसकी बहिन और बेटी का हाल चौथे हिस्से में लिखा जा चुका है

नवां बयान।

शायद नाज़रीन इस चालबाज़ लियाक़तहुसैन को भूले न होंगे और इसकी चालबाज़ी, बदमाशी, खुदगर्ज़ी, दूर अन्देशी, चोंज़रबी, चालाकी, उस्तादी, दुनियादारी, समझदारी, और अजीबो-ग़रीब दियानतदारी वग़ैरह लाइन्तहा सिफ़्तों को भी अबतक याद करते होंगे। इसने अपनी बहिन और बेटी को शाहज़ादे नसीरुद्दीन हैदर की ख़िदमत में दाखिल कर बड़ा माल मारा था, और उस (शाहज़ादे) के साथ लखनऊ आकर दर्बारी अमीरों में शुमार करलिया गया था। इसकी वे दोनों (बहिन और बेटी) भी बला की खूबसूरत और चालाक थीं और उन दोनों ने निहायत उम्दगी के साथ शाहज़ादे को अपनी मुट्ठी में कर रक्खा था। ख़ैर जो कुछ हो, लेकिन मतलबी लियाक़तहुसैन आसमानी से बिगाड़ करना नहीं चाहता था और न मसजिद बनवाने के इन्तज़ाम से ही अपने तईं अलग करना पसन्द करता था। उसकी ग़रज़ सिर्फ़ रुपयों से थी; पस, वह काम तो उसका निकल ही आया,—इस लिये उसने फिर चापलूसी का ढंग निकाला और आसमानी की बातों का यों जवाब दिया,—

"बी, आसमानी! तुम्हारा कहना बिलकुल सही है और मैं बसरोचश्म तुम्हारे काम के अञ्जाम देने के लिये तयार हूं, लेकिन बात यह है कि रुपए का काम रुपए से ही होता है। तुम यह बात खुद सोच सकती हो कि भला मैं एक सच्चा मुसलमान होकर मसजिद की कौड़ी कैसे तसर्रुफ़ में ला सकता हूं! बस, जब तुमने मुझे बेईमान समझा, मुझे भी गुस्सा आगया; मगर ख़ैर, अब तुम यह बतलाओ कि तुम्हारा वह दूसरा काम कौनसा है?"

नाज़रीन! आपने हज़रत लियाक़तहुसैन की सफ़ाई की बातें सुनी न! जो शख़्स अपनी बहिन-बेटियों से कसब कराकर रुपए

पैदा करता है, वह बशर मसजिद की कौड़ी को हराम समझेगा। इसपर कौन ईमानदार एतकाद करैगा ! ख़ैर, जो कुछ हो।

क़िस्सा कोताह लियाक़तहुसैन की बातों का जवाब आसमानी ने इस तरह दिया,—"आज तुम जिस शख़्स को मसजिद से यहां ले आये हो, वह दरअसल वही शख़्स है न, जिसे कि मैं चाहती हूं ?"

लियाक़तहुसैन,—"जो तसवीर तुमने मुझे दी थी, उससे इस शख़्स की सूरत-शक्ल हूबहू मिलती है, इसीलिये तुम्हारे कहने-बमूजिब बड़े बड़े चकमे देकर मैं इसे अपने यहां ले आया। यह शख़्स उस सामने वाले कमरे में सोया हुआ है; अगर तुम्हारा दिल चाहै तो तुम ख़ुद चलकर उसकी शिनाख़्त करलो।"

आसमानी बोली,—"हां, मैं उसे ज़रूर देखूंगी और उसके नापाक चेहरे पर थूकूंगी भी; लेकिन तुम यह तो बतलाओ कि क्या तुम मेरे इस दुश्मन को इस दुनिया से रफ़ा-दफ़ा कर सकते हो ?"

आसमानी की इस ख़ौफ़नाक बात को सुन कर लियाक़तहुसैन ज़रा थर्रा उठा और बोला,—"बी, आसमानी ! यह तुम क्या कह रही हो ! यह ख़ूबसूरत नौजवान क्या वाक़ई तुम्हारा दुश्मन है ?"

इस पर आसमानी ने कड़क कर कहा,—"हां, इससे बढ़कर दुनियां में मेरा कोई दूसरा दुश्मन नहीं ! इसने मेरे ख़ास बेटे की जान ली है; इसलिये जबतक इसका गर्म ख़ून मैं न पीलूंगी, मेरे दिल को तसकीन न होगी।"

यह सुनकर लियाक़तहुसैन सन्नाटे में आ गया, और कहने लगा,—"अल्लाह, यह बात है ! लाहौलवलाक़ूवत ! यह ख़ूबसूरत नौजवान ख़ूनी है ! तौबः ! तौबः ! बी आसमानी ! तुम्हारी ख़ातिर से आज एक ख़ूनी को मैंने अपना मेहमान बनाया !"

"और उस मेहमान का ख़ून भी तुम्हें ही अभी कुछ देर बाद अपने हाथों से करना पड़ैगा"—यों कह कर कुचली हुई नागिन

की तरह फुफकार छोड़ती हुई आसमानी ने अपनी डरावनी आंखों से लियाक़त हुसैन की तरफ़ घूर कर देखा ! ! !

आसमानी की उन डरावनी आंखों को देख कर उससे दूर—चिक के अन्दर रहने पर भी मैं डर गया और लियाक़त हुसैन के ऊपर भी कुछ न कुछ उस नज़र का असर ज़रूर ग़ालिब हुआ, इसमें कोई शक नहीं; क्योंकि वह आसमानी की बातें सुनकर सन्नाटे में आगया था और उसके नापाक चेहरे की तरफ़ बग़ौर देखता रह गया था !

उसका यह हाल देखकर आसमानी ने फिर तैश में आकर कहा,—"क्यों, तुम इतने सुस्त क्यों पड़गए ? क्या उस काम के अञ्जाम देने की ताक़त अब तुममें बिलकुल बाक़ी नहीं रही ? जल्द कहो, जो कुछ तुम्हारा इरादा हो, उसे फ़ौरन कह डालो ? अगर तुमने खुशी-खुशी मेरे दुश्मन को खपा डाला तो इसकी एवज़ में तुम्हें मैं मालामाल करदूंगी, वरन मुझे इस काम के लिये कोई दूसरा शख़्स तलाश करना पड़ेगा; लेकिन मेरा क़तई इरादा तो यही है कि इस काम को तुम्हीं करो और बखूबी फ़ायदा उठाओ।"

प्यारे नाज़रीन ! याद रखिएगा,—ये कुल बन्दिशें ख़ास मेरे लिए की जारही थीं ! ख़ैर, जो कुछ खुदावंद करीम को मञ्जूर होगा, वही होगा।

क़िस्सा कोताह, आसमानी की लालच वाली बात सुनकर मियां लियाक़त हुसैन के मुंह में पानी भर आया और उसने छूटते ही आसमानी से यह सवाल किया,—"तो उस बदकार खूनी की जान का एवज़ तुम क्या दोगी ?"

आसमानी,—"तुम क्या लोगे ?"

लियाक़त,—"आख़िर, तुम्हीं कुछ बतलाओ ?"

आसमानी,—"लिल्लाह, तुम्हीं कुछ कहो ?"

लियाक़त　　नहीं इसबारे में पेश्तर तुम्ही को कहना होगा!"

आसमानी,—"लेकिन मैं यह बात तुम्हारे मुंह से सुना चाहती हूं कि तुम कितने पर राज़ी होगे?"

लियाक़त,—"मगर नहीं, मैं उतने ही में बखूबी राज़ी होजाऊंगा जितना कि तुम अपनी खुशी से देओगी।"

आसमानी,—"ख़ैर तो मैं पांच रुपए दूंगी!"

लियाक़त,—"अय, वल्लाह! तुम क्या मज़ाक़ करने लगीं!"

आसमानी,—"इसमें मेरा क्या क़ुसूर है? जबकि तुमने इस मामले को मेरी ही मर्ज़ी पर छोड़दिया, तो, जो कुछ मैंने मुनासिब समझा, कह डाला।"

लियाक़त,—"तो क्या, तुमने एक अनमोल जान की क़ीमत सिर्फ़ पांच रुपये ही समझी?"

आसमानी,—"अजी, ये पांच रुपये तो सिर्फ़ तुम्हारे वास्ते हैं, वरन मैं तो उस मूज़ी की जान एक फूटी कौड़ी के बराबर भी नहीं समझती।"

लियाक़त,—"लेकिन, बी आसमानी! तुम्हें ज़रा इस बात पर ग़ौर करना चाहिए कि भला ऐसा ख़तरनाक काम कोई पांच रुपए में क्योंकर कर सकेगा!"

आसमानी,—"आख़िर, फिर मेरा वही पेश्तर वाला सवाल दर्पेश आया कि तुम क्या चाहते हो?"

लियाक़त,—"तो मैं अपनी कहूं?"

आसमानी,—"हां, ज़रूर कहो!"

लियाक़त,—"तो तुम्हें मेरी बातें मञ्ज़ूर करनी होंगी।"

आसमानी,—"क्या, तुमने मेरी बात मञ्ज़ूर की?"

लियाक़त,—"आख़िर यह मामला फिर क्योंकर हल हो?"

आसमानी,—"यों कि तुम ज़रा समझदारी के साथ मामला तय करडालो और मेरी हैसियत का ख़याल करके जो कुछ मुनासिब मिहन्ताना चाहो लेलो"

लियाक़त,—"ख़ैर, तो यह बात तुम्हीं क्यों नहीं बतलातीं कि तुम कहांतक देनेकी तौफ़ीक़ रखती हो ?"

आसमानी,—"मैंने तो अपनी हैसियत का बयान पेश्तर ही कर दिया।"

लियाक़त,—"क्या वेही सिर्फ़ पांच रुपए।"

आसमानी,—"तो, ख़ैर, दस लेलो।"

लियाक़त,—"क्या ख़ूब! अजी बी, तुम तो गल्ले का निर्ख़ करने लगीं!"

आसमानी,—"मेरे ख़याल से तो यह मूज़ी गल्ले से भी गया-गुज़रा है!"

लियाक़त,—"ख़ैर, तो मैं अब मामले की बात करता हूं; यानी अगर तुम पचासहज़ार रुपए मुझे दो तो मैं इस ख़ूनी को रफ़ा-दफ़ा करदूं।"

आसमानी ने कहा,—"अय, तौबः! यह तुम क्या फ़र्माने लगे? भला, मैं एक बेवा-बेकस औरत इतने रुपए कहां पाऊंगी! ज़रा, तुम मुन्सिफ़ी करो और मेरी हालत पर ग़ौर करके मुझपर रहम करो। मैं इतने रुपए देने की औक़ात नहीं रखती, चुनांचे लाचार हूं; मगर हां, इतना मैं ज़रूर कह सकती हूं कि अगर यह काम तुम कर दोगे तो मैं तुम्हें दसहज़ार रुपए ज़रूर दूंगी।"

नाज़रीन! इस बहस-मुबाहिसे को ज़ियादह तूल न देकर मैं सिर्फ़ इतना ही लिखना काफ़ी समझता हूं कि निस्फ़ानिस्फ़, यानी पच्चीसहज़ार रुपए पर मेरी जान का फ़ैसला क़रार पाया और फिर यह हुज्जत शुरू हुई कि रुपए कब दिए-लिए जायंगे! यानी लियाक़तहुसैन तो रुपए पेशगी चाहता था, मगर आसमानी काम होने के बाद देना मंज़ूर करती थी। आख़िर, यह मामला भी तय हुआ और आधा रुपया पेशगी, और आधा काम होने के बाद दिया जाना तय पाया

ग़रज़, जब ये सब मामले तय हो चुके, तब लियाक़तहुसैन ने आसमानी से पूछा,—"जिस यूसुफ़ की तसवीर तुमने मुझे दीथी, और जिसका मकान तुमने मसजिद के लिये लेलिया है, और जो इस वक्त मेरे यहां मौजूद है, वह अपना नाम कुछ और ही बतलाता था और अपने तईं देहली का रहने वाला कहता था।"

इतना कहकर लियाक़तहुसैन के साथ मेरी जो कुछ बातें हुई थीं, उन्हें उसने आसमानी को सुनादिया और फिर यों कहा,—"वह जब फ़ारिग होने के लिये दूसरी कोठरी में गया था, तो मेरे ख़िदमतगार हुसेनी से मेरे नाम और इस महल्ले के बारे में कुछ दर्य्याफ़्त करना चाहा था, लेकिन मैंने उसे पेश्तर ही कुछ समझा बुझा दिया था, इसलिए उस चालाक नौकर ने तुम्हारे दुश्मन की बातों का जवाब बड़ी अक़्लमन्दी से दिया; यानी वह (नौकर) महज़ देहाती और अनजान बन गया और उसने अपना नाम अल्लर बतलाया, लेकिन ख़ैर, अब वे निस्फ़ रुपये कब मिलेंगे?"

आसमानी ने लियाक़तहुसैन की बातों को सुनकर कहा,—"तुम उस मूज़ी को बिलफ़ैल सब्ज़-बाग दिखलाकर अपने यहां नज़र क़ैद कर रक्खो। मैं दो ही चार रोज़ के अन्दर तुम्हें आधे रुपए देजाऊंगी, तब तुम उसे मारडालना और उसका सर मुझे देकर फ़ौरन अपने आधे रुपए भी लेलेना।"

यह सुनकर लियाक़तहुसैन ने कहा,—"बिहतर, ऐसा ही होगा; लेकिन हां, उसे मैं अपने तरीक़े पर ख़तम करूंगा।"

आसमानी,—"वह क्या?"

लियाक़त,—"वह यह कि मैं तुम्हारे दुश्मन का ख़ून कुछ अपने इस मकान के अन्दर तो करूंगा नहीं! हां मैं यह करूंगा कि उसे भुलावा देकर यहांसे कुछ दूर जङ्गल में लेजाऊंगा, और वहीं उसका ख़ात्मा कर उसका सर तुम्हारे हवाले करूंगा। बस, इस बारे में मेरी जो कुछ दिली मंशा थी, वह मैंने तुम पर ज़ाहिर

करदी। अब तुम यह बतलाओ कि जो तरीक़ा मैंने निकाला है, उसमें तुम्हें कोई उज़्र तो नहीं है?"

आसमानी,—"नहीं, मुझे कोई उज़्र नहीं है; तुम चाहे जिस तरह उसे ख़तम कर डालो, मुझे तो फ़क़त उसके सिर से मतलब है।"

लियाक़त हुसैन ने कहा,—"अगर ख़ुदा ने चाहा तो तुम्हारा दिली मक्सद बर आएगा; मगर यह तो बतलाओ कि इस शख़्स के साथ तुम्हारी ऐसी दुश्मनी क्यों है!"

आसमानी,—"आह, इतनी जल्दी तुम भूलगए! मैंने अभी तो तुमसे वह बात कही थी कि यह कम्बख़्त मेरे हक़ीक़ी बेटे का क़ातिल है!"

लियाक़तहुसैन ने कहा,—"क्या इस बारे का मुफ़स्सिल हाल तुम मुझे सुना सकती हो कि इस मूज़ी ने तुम्हारे बेटे को क्यों मारा?"

आसमानी,—"यह क़िस्सा बड़े तूलतवील का है, जिसके कहने के लिये यह वक्त काफ़ी नहीं; मगर तुम इतमीनान रक्खो कि इस नामाकूल के मारे जाने के बाद तुमको वह क़िस्सा ज़रूर सुनाऊंगी।"

यों कहकर आसमानी उठ खड़ी हुई, और बोली,—"लो, अब चलो और अपने मेहमान की सूरत मुझे दिखलाओ; ताकि मैं उसे पहिचानलूं कि यह वही शख़्स है, या कोई दूसरा!"

यह सुनकर लियाक़तहुसैन भी उठखड़ा हुआ और बोला,—"हां चलो, देखलो और अपना जी भरलो।"

इसके बाद वे दोनों उस कमरे के बाहर हुए। उनके जाने के साथ ही उस बोरक़ेवाली ने, जो अबतक बराबर मेरी बगल में बैठी हुई थी, मुझे चुटकी भरी, और बहुतही आहिस्ते से कहा,—"अब उठो और जल्द मेरे साथ चलो; मैं तुम्हें अभी इस मकान के बाहर कर देती हूं तुम बाहर होते ही ठीक अपने दाहिने हाथ

की गली से निकल कर सड़क पर होजाना और फिर जिधर तुम्हारा जी चाहे, चले जाना। तुमने तो अब सारी बातें अपने कानों से सुनही ली हैं। पस, फ़ुर्सत के वक़्त इन बातों पर बख़ूबी ग़ौर करना और अपने तईं दुश्मनों से बचाए रखना।" यों कह कर उसने एक छोटासा पुलिन्दा मेरे हाथ में देदिया और चटपट सीढ़ियों से उतर कर एक खिड़की के रास्ते से मुझे उस मकान के बाहर कर दिया। मैंने बहुतेरा चाहा था कि उससे दो चार बातें पूछूं, लेकिन उसने मुझे ज़रा भी मौक़ा बोलने का न दिया और मुझे बाहर करके फ़ौरन खिड़की बन्द करली।

उस मकान से बाहर होतेही बोरक़ेवाली के कहने मुताबिक़ मैं दाहिने हाथ की तरफ़ तेज़ी के साथ चला और चन्दक़दम चलने के बाद मैंने एक चौड़ी सड़क पाई। उस गली से निकलते ही सड़क के दूसरे जानिब,—गली के ठीक सामने, मैंने एक मसजिद देखी, उसे मैं देखते ही पहिचान गया और साथ ही यह भी जान गया कि लियाक़तहुसैन का मकान किस महल्ले में है। यानी वह महल्ला सफ़दरगंज के नाम से मशहूर था और वह मसजिद मेरी जानी हुई थी। ख़ैर, मैं उस मुक़ाम का ख़ाका अपने दिलही दिल में नकश करके तेज़ी के साथ उस तरफ़ रवाना हुआ, जिस तरफ़ कि वह सरा थी, जिसमें कि मैंने डेरा डाला था।

उस वक़्त घड़ी ने चार के गजर बजादिए थे, इस लिये रात बहुत ही थोड़ी बाक़ी रह गई थी। पहिले तो मैंने यह चाहा था कि कहीं पर ठहर जाऊं और सवेरा होने पर उस सरा की तरफ़ चलूं; लेकिन आसमानी का ख़ौफ़ बना हुआ था और यह मैं बख़ूबी समझ गया था कि, 'मुझे मकान से ग़ायब हुआ देख आसमानी मेरा पीछा ज़रूर करैगी'।

दसवां बयान ।

उस मकान से बाहर होते ही बोरक़ वाली के कहने मुताबिक़ मैं दाहिने हाथ की तरफ़ तेज़ी के साथ चला और चन्द क़दम चलने के बाद मैंने एक चौड़ी सड़क पाई। उस गली से निकलते ही सड़क के दूसरे जानिब,—गली के ठीक सामने, मैंने एक मसजिद देखी। उसे मैं देखते ही पहिचान गया और साथ ही यह भी जान गया कि लियाक़त हुसैन का मकान किस महल्ले में है। यानी वह महल्ला सफ़दरगंज के नाम से मशहूर था और वह मसजिद मेरी जानी हुई थी। ख़ैर, मैं उस मुक़ाम का ख़ाका अपने दिल ही दिल में नक्श करके तेज़ी के साथ उस तरफ़ रवाना हुआ, जिस तरफ़ कि वह सरा थी, जिसमें कि मैंने डेरा डाला था।

उस वक्त घड़ी ने चार के गजर बजा दिए थे, इसलिये रात बहुत ही थोड़ी बाक़ी रह गई थी। पहिले तो मैंने यह चाहा था कि कहीं पर ठहर जाऊं और सवेरा होने पर उस सरा की तरफ़ चलूं; लेकिन आसमानी का ख़ौफ़ बना हुआ था और यह मैं बख़ूबी समझ गया था कि, 'मुझे मकान से ग़ायब हुआ देख आसमानी मेरा पीछा ज़रूर करैगी,' यही वजह थी कि मैं एक लहज़ा भी कहीं न ठहरा और तेज़ी के साथ क़दम बढ़ाता हुआ एक जानिब को चल निकला। लेकिन फिर दिल ही दिल में मैंने यह सोचा कि मेरा इस तरह आम सड़क से जाना ठीक नहीं है, क्योंकि अगर दुश्मन ने मेरा पीछा किया हो, तो वह दूर ही से मेरी शिनाख़्त कर सकता और ब आसानी मुझे गिरफ़्तार भी कर सकता है।

मैं दिल ही दिल में यों सोचता हुआ तेज़ी के साथ क़दम उठाए हुए चला जा रहा था कि मुझे अपने पीछे किसी के आने की आहट मालूम हुई। बस तुरन्त मैंने फिर कर देखा तो क्या दिखलाई दिया कि दो शख़्स तेज़ी के साथ क़दम बढ़ाए हुए मेरी जानिब चले

आरहे हैं ! ' उस वक़्त, जिस वक़्त कि मैंने फिर कर अपने पीछे आनेवालों को देखा था, वे मुझसे बीस-पचीस क़दम के फ़ासले पर थे, इसलिये यह मैं नहीं जान सका कि दरअसल वे मेरे दुश्मन हैं या कोई दूसरे राहगीर !

क़िस्सा कोताह, मारे दहशत के फिर मैं एक लहज़ा भी वहां, यानी सड़क पर न ठहरा और चट बाईं तरफ़ वाली एक तङ्ग और अंधेरी गली में घुस पड़ा। गो, मैं उस गली में घुस गया, लेकिन कई क़दम चलने के बाद मैं सड़क की जानिब मुहं करके इसलिये खड़ा होगया कि यह देखलूं कि वे दोनों शख़्स किस तरफ़ जाते हैं ! मैं इतनी बातें मुश्किल से सोचने पाया था कि वे दोनों शख़्स उस गली के सामने आकर ठहर गए और उसी गली की तरफ़ हाथ का इशारा कर कर के आपस में कुछ बात चीत करने लग गए।

मेरे अन्दाज़ से वे दोनों शख़्स मुझसे पच्चीस-तीस क़दम से ज़ियादा दूर न थे। गो, मैं उन दोनों को बख़ूबी देख रहा था, लेकिन मैं अंधेरे में छिपे रहने के सबब उनकी नज़रों में नहीं पड़ा था; मगर मैं यह जानकर बहुत ही घबरा गया था कि अगर वे दोनों शख़्स इसी गली के अन्दर घुस आवें तो फिर मुझे अपने तईं उनके हाथों से बचाए रखना मुहाल होजायगा !

लेकिन, नाज़रीन ! जिसको ख़ुदापर एतक़ाद होता है, उसकी मुश्किलें अक्सर आसान होजाया करती हैं; वही बात मेरे रू-ब-रू भी पेश आई; यानी जहां पर उस वक़्त उस गली में मैं खड़ा हुआ था, वहीं पर अपने बाएं हाथ की तरफ़ एक दरवाज़ा खुला हुआ मैंने देखा। ज्यों हीं मैंने उस दरवाज़े की तरफ़ से नज़र हटाकर सामने की तरफ़ देखा, त्योंही क्या देखा कि वे दोनों शख़्स फ़ौरन उस गली में घुसे !

यह देखते ही मैं चट उस मकान के अन्दर घुस गया, जिसका

दरवाज़ा खुला हुआ था; यानी जिसका बयान मैं अभी कर आया हूं। ग़रज़, मकान के अन्दर घुसते ही मैंने फ़ौरन उस दर्वाज़े को भीतर से बन्द करलिया और यह इन्तज़ार करता रहा कि देखूं वे दोनो शख़्स गली में बराबर आगे बढ़ते जाते हैं, या कुछ दूर तक जाकर फिर सड़क पर वापिस जाते हैं। लेकिन क़रीब आधघन्टे के गुज़र जाने पर भी जब मैंने उन दोनों शख़्सों की कोई आहट न पाई, तो अपना दिल मज़बूत करके बहुत ही आहिस्ते-आहिस्ते वह दरवाज़ा खोला और बाहर की जानिब सिर निकालकर इधर-उधर खूब नज़र गड़ाकर देखा; लेकिन उस गली के अन्दर जहां तक मेरी नज़र पहुंच सकती थी, कोई भी दिखलाई न दिया।

उस वक़्त सुबह की सफ़ेदी आसमान पर बख़ूबी फैल गई थी, और उस तङ्ग गली में भी हलका उंजाला फैलने लग गया था। ग़रज़, यह सब देखकर मैं उस मकान से बाहर हुआ और चट उसी सड़क पर आकर अपने डेरे की तरफ़ रवाना हुआ। उस वक़्त मैंने गली के बनिस्बत सड़क से ही जाना मुनासिब समझा था, क्योंकि सुबह होगया था और दिन-दहाड़े बरसरे-सड़क रहज़नी के होने का उतना ख़ौफ़ न था।

क़िस्सा कोताह, डेढ़ घंटे के अन्दर अन्दर मैं उस सरा में जा पहुंचा, जहांपर कि मेरा डेरा था। मैंने वहां जाकर क्या देखा कि मेरा वही साथी; जिसका नाम मन्सूर है, उस सरा में मौजूद है और उस ख़िदमतगार के साथ बातें कररहा है, जिसे मैंने कल शाम को लियाक़तहुसैन के मकान में देखा था, और जिसका नकली नाम अख़्तर और असली नाम हुसैनी था।

ख़ैर, मुझे देखते ही वह मेरा साथी दोस्त मन्सूर मेरी तरफ़ मुख़ातिब हुआ और कई क़दम आगे बढ़ और मेरे हाथ को अपने हाथ में लेकर बड़ी खुशी के साथ कहने लगा,—"अल्ला ! तुम आगए ! बड़ी खुशी की बात हुई ! (हुसैनी की तरफ़ इशारा

करके) यह शख़्स अभी थोड़ी ही देर हुई कि यहां आकर तुम्हें तलाश करने लगा है। क्या यह आदमी तुम्हारी जान-पहिचान का है, या क्या बात है?"

अपने दोस्त की बातें सुन और उसे तख़लिये में लेजाकर मैंने मुख़्तसर तौर पर यों कहा कि,—"प्यारे दोस्त! मैं कल शब को एक खूनी डाकू के फेर में पड़गया था! वह तो ख़ुदा ही ने ख़ैर की कि मैं नई जगह होने के सबब सोया न था; यही वजह हुई कि मैं उस डाकू की नीयत को जान गया और किसी-किसी तरह वहाँ से अपनी जान लेकर भागा हुआ यहांतक आ पहुंचा हूं। मुझे तो हर्गिज़ यह उम्मेद न थी कि फिर भी तुम्हारा दीदार नसीब होगा; लेकिन उस ख़ुदावन्द करीम के फ़ज़ल से मैं जीता-जागता तुम्हारे रू-ब-रू आ पहुंचा!"

ग़रज़, मेरी बातें ग़ौर के साथ सुनकर उस नौजवान मन्सूर ने कहा,—"ऐसा! अल्लाह! यह तो तुमने एक अजीब दास्तान सुनाई! ख़ैर, मैं इस कम्बख़्त हुसैनी की बांद अभी ग़र्क़ी किए देता हूं, और इसे कुछ दिनों के लिए बेकाम करके यहांसे रुख़सत करता हूं।"

यों कहकर उसने, और मैंने भी, जब नज़र फेरकर देखा तो उस सरा में कहीं हुसैनी का नामोनिशान भी न था!

यह देखकर मैं बड़े पसोपेश में पड़गया, लेकिन, मेरे नौजवान दोस्त ने बिलकुल लापरवाही के साथ कहा,—"कुछ परवा नहीं, अगर वह मुरदार अपनी जान लेकर भाग गया तो उसे जाने दो और अब उसकी फ़िक्र दिल से दूर करो। आओ, बैठो, और सुनो, कि कल मेरी रात किस तरह कटी!"

अल ग़रज़, वह मेरा हाथ पकड़ कर उस कोठरी में लेगया, जिसमें हमलोगों का डेरा पड़ा हुआ था! उसके अन्दर जाकर हमदोनों चारपाइयों पर आमने-सामने बैठ गए और फिर बातों

का सिलसिला यों शुरू हुआ,—

उसने कहा,—"तुमसे अलहदा होकर मैं उस जौहरी की तलाश में गया था, लेकिन उसका पता मुझे अभी बिलकुल नहीं लगा है; लेकिन तुम्हारे मुबारक क़दम के साथ होने की बदौलत एक बड़ी खुशी मुझे दस्तयाब हुई। वह यह कि जब मैं परी बानू का पता न पाकर वापस आरहा था तो एक गली के मोड़ से निकल कर एक सवार एक तरफ़ को निकल गया। मैं उस वक़्त उस सवार के बिलकुल क़रीब पहुंच गया था, इसलिये मैंने क्या देखा कि ज्योंहीं वह सवार गली का मोड़ घूमकर एक तरफ़ को रवाना हुआ, त्योंही उसके ज़ेब से कोई चीज़ सड़क पर गिर पड़ी। यह देखते ही मैंने उसे फ़ौरन उठा लिया और जिस तरफ़ वह सवार गया था, उसी जानिब को तेज़ी के साथ मैं दौड़ा। गो, इन्सान घोड़े की तेज़ी का मुक़ाबिला नहीं कर सकता, लेकिन फिर भी मैंने उस सवार को जा लिया, और उसे ठहरा कर उसकी चीज़ उसके हवाले करते हुए यों कहा,—"जनाबमन! यह रूमाल, जिसके अन्दर कागज़ मालूम होता है, आपकी ज़ेब से गिर गया था; यह देखकर इसे मैंने उठा लिया और इसको आपके हवाले करदेना अपना फ़र्ज़ समझा। अब आप बराय मिहर्बानी अपनी चीज़ सम्हाल लें और साथ ही मेरा सलाम भी ले,। साथ ही इसके इतना और भी कहदेना मैं मुनासिब समझता हूं कि इस रूमाल के अन्दर कैसा कागज़ लपेटा हुआ है, इसे मैंने नहीं देखा है: क्योंकि इतना वक़्त ही मुझे कब मिला ? यानी ज्योंहीं इसे मैंने गिरते देखा, त्योंही उठाकर दौड़ा हुआ आपके पास मैं चला आया!"

"गरज़, मेरी बातें सुन और उस रूमाल को मेरे हाथ में देख वह सवार एक चीख मार उठा। फिर उसने बड़ी फुर्ती के साथ घोड़े से उतर, उस रूमाल को ले, उसे खोल, उसके अन्दर के

काग़ज़ को अच्छी तरह जांच, और फिर उसे बदस्तूर लपेट औ' उस रूमाल को हिफ़ाज़त के साथ अपनी जेब में रखकर मे' हाथ को दोस्ताना ढंग से पकड़ लिया और बड़ी आजिज़ी के साथ यों कहा,—"अय अजनबी दोस्त, आज तुमने मेरे साथ व: भलाई की है कि जिसकी एवज़में अगर मैं अपना सर भी तुम्हारी नज़र करदूं तो भी तुम्हारी भलाई का काफ़ी एवज़ न समझा जायगा। मेरे इस कलाम का असली मतलब यह है कि यह काग़ज़ एक बहुत ही ज़रूरी शाही हुक्मनामा है। अगर आज यह मेरे हाथ से जाता रहता तो शायद कल मेरे धड़ पर सर भी क़ायम न रहता। पस, इसे मुझतक पहुंचाकर जो कुछ भलाई तुमने आज मेरे या मेरे बालबच्चों के साथ की है, उसे मैं ताज़ीस्त न भूलूंगा, और ज़िन्दगी भर तुम्हारा अहसानमन्द बना रहूंगा।"

नाज़रीन! उस सवार की कही हुई बातों को मुझे सुनाकर मेरे दोस्त मन्सूर ने मुझसे फिर यों कहा,—"भई, यूसुफ़! फिर तो उस सवार के साथ मेरी बहुत कुछ बातें हुई, जिनके सिलसिले में उसका हाल मैंने जाना और अपना उसे सुनाया; लेकिन बानू या उसके वालिद का पता उसे मैंने कुछ भी न बतलाया, ग़रज़ फिर तो वह सवार मुझे अपने साथ अपने मकान ले गया और वहां जाकर उसने बड़ी खूबी के साथ मेरी तवाज़ः की। फिर तो इधर-उधर की बहुत सी बातें हुआ कीं, जिनके कहने की कोई ज़रूरत नहीं है; लेकिन हां, यह सुनकर तुम निहायत खुश होगे कि वह शख़्स, जिसका कि रूमाल मैंने पाया था, शाही दर्बार का एक आला अफ़सर है और उसने सौरुपये महीने की तनखाह देने की ज़बान देकर मुझे अपना मीरमुन्शी बनाया है। यह जानकर बेशक तुम्हें ताज्जुब होगा कि कल शाम होने के पेश्तर ही मैं शाही वज़ीर आज़म के खास पेशकार मिर्ज़ा इमामुद्दीन का मीरमुन्शी बन गया और एक माह की तनख्वाह भी मुझे पेशगी मिलगई।

इसके बाद उन्हीं मिर्ज़ा साहब से मैंने उस सरा में रहने का परवाना हासिल किया, जो कि गोमती के किनारे पर बनी हुई है, यानी जिसे तुमने कल मुझे दिखलाया था और जिसका नाम 'ज़मुर्रद की सरा' बतलाया था। ग़रज़ यह कि उस परवाने या हुक्मनामे के पाने के साथ ही मैंने फ़ौरन उस सरा में जाकर तीसरे मंज़िल की तीन कोठरियां अपने कब्ज़े में करलीं और दो घण्टे के अन्दरही अन्दर ज़रूरियात के कुल सामान बाज़ार से ख़रीद कर उसमें ले जा रक्खे। इसके बाद एक पहर रात गुज़रने पर मैं तुम्हें तलाश करता हुआ यहां आया था, और तुम्हारे इन्तज़ार में आधीरात तक बैठा रहा था; लेकिन जब रात आधी से ऊपर पहुंची और तुम न आए, तो मैंने यह समझ लिया कि अब तुम रात को यहां न आओगे; क्योंकि कल इस मनहूस सरा और यहां के शैतान सरावाले के बारे में जो कुछ बातें हमारे-तुम्हारे दर्म्यान हुई थीं; वे मुझे भूली न थीं; इसलिये तुम्हारे कहने-बमूजिब इस ख़तरनाक सरा में रात गुज़ारना मैंने मुनासिब न समझा और ज़मुर्रद की सरा में जाकर आराम से पैर फैला कर सोया; लेकिन तुम्हारे अन्देशे से मुझे रात भर एक तरह की बेचैनी सताती रही! ख़ैर, अलस्सुबह ज्योंही मैं यहां आया कि उस शख़्स को, जिसका नाम तुमने अख़्तर या हुसैनी बतलाया है, तुम्हारे बारे में पूछ-ताछ करते हुए देखा। इतने ही में ज्योंहीं मैं इस सरा में दाख़िल हुआ, भटियारे ने हुसैनी को मेरे रू-ब-रू करके यों कहा कि,—'लो, अब इनसे अपने मतलब की बात पूछो;' इतना कह कर भटियारा हट गया और हुसैनी मुझसे यों पूछने लगा कि,—'क्या यूसुफ़ नाम का कोई शख़्स यहीं ठहरा हुआ है, जो कि अपने तईं देहली का जौहरी बतलाता है?' उसके इस सवाल का जवाब मैं कुछ दिया ही चाहता था कि तुम आगए, और जब तख़लिए में तुम्हारे साथ मेरी बातें होने लगीं, तो वह कम्बख़्त मारे दहशत के फ़ौरन नौ दो

ग्यारह होगया ! ”

अपने दोस्त मन्सूर की बातें सुनकर मैंने हंसकर कहा,—“अय दोस्त ! खुदा ताला की अजब शान है कि कल हम-तुम दोनों ही एक एक शख़्स के मेहमान हुए थे, लेकिन मेरे लिए वह बात पेश आई और तुम्हारे लिए यह। मगर ख़ैर, अब क्या करना चाहिए?”

मन्सूर ने कहा,—“ अब यहां एक लहज़ा भी न ठहरना चाहिए। बस, फ़ौरन उठो और मेरे साथ यहांसे चलेचलो। ”

इसके बाद हम-दोनो आदमी अपनी जो कुछ चीज़ें थीं, उन्हे लेकर उस कोठरी से बाहर हुए। मन्सूर ने उस दिन के भी किराये का पैसा देकर मेरे साथ अपना क़दम बढ़ाया। गो, वह भटियारा तरह तरह के सवाल करने लगा, यानी,—“आपलोग कौन हैं, कहांसे आए हैं, अब कहां तशरीफ़ लेजा रहे हैं, क्या यहां किसी किस्म की तक़लीफ़ हुई है, या कोई और बात है, जिससे यह जगह छोड़ी जाती है, यह तो निहायत आराम की जगह है, लेकिन फिर भी अगर आपलोग कुछ और आराम लिया चाहें तो आपके हुक्म-बमूजिब कुल आराम की चीज़ें बात की बात में मुहैया हो सकती हैं; ” वग़ैरह वग़ैरह—

गरज़ यह कि, वह भटियारा बहुत कुछ बड़बड़ाया किया, लेकिन फिर हमलोगों ने उसकी किसी बात का भी जवाब न दिया और सरा से निकलकर एक तरफ़ का रास्ता लिया।

क़रीब पांचसौ क़दम के रास्ता तय करने के बाद हमलोग एक चौहराहे पर पहुंचे। वहां मैंने क्या देखा कि घोड़े पर सवार लियाक़तहुसैन सामने से चला आरहा है! वह मुझे यकबयक देखकर झिझका और ज़रा रुका भी, लेकिन मन्सूर को मेरे साथ देख वह फ़ौरन अपने रास्ते चला गया।

उसके चलेजाने पर मैंने मन्सूर से कहा,—“ तुमने इस सवार को देखा ? ”

उसने कहा,—"हां, मैंने उसे ज़रूर देखा, और साथ ही यह भी देखा कि वह हैरतभरी निगाहों से तुम्हारी तरफ़ देखने लग गया था !"

मैंने कहा,—"वल्लाह ! तुमने खूब अन्दाज़ा किया, ! यह वही खूनी डाकू है, जिसके हाथ से अपनी जान लेकर मैं भाग आया हूं।"

उसने कहा,—"तो यह बात तुमने ज़रा पेश्तर क्यों न कही ?"

मैंने पूछा, —"पेश्तर सुनकर तुम क्या करते ?"

उसने गुस्से के साथ कहा,—"मैं यह करता कि उसे घोड़े से नीचे खैंचकर मारे जूतों के उसका कचूमर बाहर निकाल देता; इसके बाद अपनी राह लेता।"

यह सुन और हंसकर मैंने उसके हाथ को ज़रा मुहब्बत के साथ धरकर दबा दिया और कहा,—"ख़ैर, दोस्त, उसका इन्साफ़ खुदा पर छोड़ो।"

इसके बाद हमलोग उस आलीशान इमारत के अन्दर पहुंच गए, जिसका नाम ज़मुर्रद की सरा था। उसके अन्दर जा और अपने डेरे को देख मेरे ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा और मैंने बड़ी खुशी के साथ मन्सूर की तरफ़ देखकर कहा,—"अल्लाह आलम ! इतनी तयारी तुमने कल रात ही भर में कैसे कर डाली ?"

यह सुनकर उसने एक क़हक़हा लगाया और कहा,—"अजी हज़रत, रातभर का नाम न लो; क्योंकि मैं तुमसे शायद यह बात कह आया हूं कि इस तयारी में मुझे सिर्फ दो-चार घंटे से ज़ियादा वक्त नहीं लगाना पड़ा।"

किस्सा कोताह, फिर तो हमलोग अपने मामूली कामों में मशगूल हुए।

ग्यारहवां बयान।

यहां पर नाज़रीन इतना और समझ लें कि उस बोरकेवाली ने जो एक छोटासा पुलिन्दा मुझे दिया था, उसे मैं तबतक अपने कपड़ों के अन्दर छिपाए हुए था और उसका हाल मैंने अपने नए दोस्त मन्सूर पर ज़ाहिर नहीं किया था।

इस जगह पर मैं पेश्तर इस 'ज़मुर्रद की सरा' का कुछ हाल लिखकर तब और बातों का बयान करूंगा।

यह सरा; तिमंज़िली थी, गोमती के ऐन किनारे पर थी, और इतनी लम्बी-चौड़ी थी कि इसमें पांचहज़ार आदमी बड़े आराम के साथ रह सकते थे। इसका सदर दरवाज़ा इतनाबलन्द था कि अम्बारीदार हाथी बड़ी आसानी से आ-जा सकता था। जैसे एक सदर दर्वाज़े का हाल मैंने लिखा है, वैसेही तीन दर्वाज़े इसमें और थे; यानी, चारों तरफ़ चार दर्वाज़े थे, जो एक दूसरे के ठीक सामने थे। सबसे नीचे की मंज़िल में बड़ा भारी सहन था, उसके चारों तरफ़ दुहरे दालान थे और उनके बाद एक-एक दर की कोठरियां बनी हुई थीं, जिनकी गिनती सैकड़ों के ऊपर थी। इसी मरातिब में एक तरफ़ सरा के अहलकार रहते थे, बावर्चीख़ाने थे और कई फ़िरक़ेवालों की कई क़िस्म की चीज़ों की दूकानें थीं। इनके अलावे और जो बाक़ी की कोठरियां थीं, उनमें मामूली दर्जे के लोग आकर ठहरा करते थे। सरा के इन्तज़ामकार बुरे न थे, लेकिन रिशवत का बाज़ार ख़ूब गर्म था; यानी जो मुसाफ़िर जितना खर्चता, वह उतने ही दिनों तक बड़े आराम के साथ अपनी ख़ातिरख़ाह जगह में रह सकता था। इससे अच्छी दूसरी सरा लखनऊ में न थी। यह तो नीचे के मरातिब का हाल हुआ, अब इसके ऊपरवाले दूसरे मरातिब में चलिए—

दूसरे मरातिब में आने के लिए हर चहार तरफ से चार जीन

बने हुए थे, जिनका सिलसिला बराबर ऊपर की अख़ीर मंज़िल तक चला गया था। दूसरे मरातिब में दुहरे दालानों के बजाय इकहरे दालान थे, और कोठरियों के बजाय कमरे बने हुए थे। इसी तर्ज़ के दालान और कमरे तीसरे मरातिब में भी बने हुए थे। अब रही चौथी मञ्ज़िल की बात, वहांपर खूब लम्बी-चौड़ी छत्त बनी हुई थी और छत्त के चारों तरफ़ इकहरे कमरे कुछ कुछ दूर के फ़ासले पर बने हुए थे। यहांपर एक बात का कहना मैं पेश्तर भूलगया, उसे भी अब सुन लीजिए। वह बात यह है कि इस सरा के एक जानिब तो दरियाए गोमती था, और बाक़ी तीन तरफ़ खूब चौड़ी चौड़ी सड़कें थीं; मगर सरा के नीचे की मञ्ज़िल वाली कोठरियों में सड़क के जानिब कोई खिड़की या दर्वाज़ा न थे। मगर उसके ऊपरवाली दोनों मञ्ज़िलों में सड़क की तरफ़ बराबर दर्वाज़े बने हुने थे, जिनकी चौखटों में मोटे मोटे लोहे के छड़ लगे हुए थे। सबसे ऊपर सड़क और गोमती के जानिब, यानी हर चहार तरफ़ खूब मज़बूत और खूबसूरत कटहरे लगे हुए थे, जिनकी ऊंचाई ढाई हाथ से कम न थी। इस ख़ाके को नाज़रीन अपने दिल में नक़्श करलें और अब दूसरा हाल सुनें।

मेरे अजनबी दोस्त ने इसी सरा के गोमती की तरफ़ वाले कोने के तीन कमरे, जो तीसरी मञ्ज़िल में थे, ठीक करलिए थे। इन तीनों कमरों में से जो कोने की तरफ़ था, उसमें मेरे अजनबी दोस्त ने अपना डेरा ठीक किया था; बीच का कमरा बैठने-उठने के लिए मुकर्रर किया गया था, और उसके बाद का, यानी तीसरा कमरा, मेरे वास्ते था। ये तीनों कमरे बिलकुल बराबर के थे और अन्दर ही अन्दर एक दूसरे से मिले हुए थे। ये आठ-आठ हाथ लम्बे-चौड़े और ऊंचे भी थे। इनमें से हरएक में तीन-तीन तरफ़ तीन तीन दर्वाज़े थे और चौथी तरफ़ दीवार में उन्हीं दर्वाज़ों की लम्बाई-चौड़ाई में तीन-तीन आलमारियां बनी हुई थीं

यानी उन तीनों में से हर एक कमरा बारह दर का था। इन कमरों मे आने का रास्ता सिर्फ उसी कमरे में से था, जो कि मेरे लिए मुकर्रर किया गया था; क्योंकि ज़ीना मेरे ही कमरे के बगल में था।

इस इन्तज़ाम के बारे में मेरे दोस्त ने मुझे यों समझा दिया था कि,—"मेरी तो अब नौकरी मुकर्रर होगई है, इसलिए मेरा तो बहुतसा वक्त अब वहीं गुज़र जाया करेगा और कभी कभी तो मैं तुम्हारे पास से बिलकुल ग़ैरहाज़िर ही रहा करूंगा, इसी लिए अख़ीर का कमरा मैंने अपने वास्ते ठीक किया है, क्योंकि जब मैं आऊंगा, तब उसमें पड़ रहूंगा और जब मैं न मौजूद रहूंगा, तब वह बन्द रहा करेगा। बीच के कमरे में हम-तुम बैठें-उठेंगे, गप-शप करेंगे और आराम भी करेंगे। और तुम्हारा कमरा ज़ीने के पास इसलिये रक्खा गया है कि एक तो तुम्हारे पास अभी कोई कीमती रक़म है नहीं, दूसरे यह कि जब कभी मैं गाहे ब गाहे रात को आजाऊंगा तो तुम आसानी से दर्वाज़ा खोल सकोगे।"

बस, मेरे दोस्त का जो कुछ बयान था, उसे मैंने ऊपर लिख दिया; अब यहां पर मैं यह लिखता हूं कि जब मैं अपने दोस्त के साथ इस सरा में आया और इन कमरों को देखा तो मारे खुशी के तबीयत फड़क उठी; यानी, इन कमरों में पलंग, बिछावन, गद्दे, तकिए, कालीन, फ़र्श, उगालदान, हुक़्के, चिलमची, आफ़्तावा, कड्ढी, आईने, इतर, फुलेल, वगैरह-वगैरह ज़रूरियात के कुल सामान, जो बिलकुल नए और उम्दा थे, मुहैया थे। कहने का मतलब यह कि वे तीनों कमरे निहायत तर्ग्हदारी के साथ आरास्ता किए गए थे और कुल चीज़ें करीने से रक्खी हुई थीं।

ग़रज़ यह कि इस नई जगह में जब आकर हमलोगों ने कपड़े बदले और हाथ मुंह धोकर फ़ारिग़ हुए तो सरा के बावर्ची ने आकर उसी मेरे कमरे में दस्तरख़ान बिछाकर बहुत ही उम्दा व लज़ीज़ खाना चुन दिया और हम दोनों दोस्त बैठकर बड़े मज़े के

साथ खाना खाने लगे। जब तक हमलोग खाना खाते रहे, आपस मे महज़ मामूली बातें होती रहीं, क्योंकि बावरची मौजूद था; और उसके सामने पोशीदा बात करनी मुनासिब न थी; मगर ख़ैर, जब हम लोग खाना खा चुके, तब उस बावर्ची ने कुल बर्तनों को समेट कर दस्तरख़ान उठा लिया और मेरे दोस्त की जानिब मुख़ातिब होकर यों पूछा,—" और किसी चीज़ की ज़रूरत है ?"

मेरे दोस्त ने जवाब दिया,—"नहीं, बिल्फ़ेल किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं है। अगर कोई चीज़ दरकार होगी, तो मांग ली जायगी। पस, तुम्हें जो कुछ समझा दिया गया है, उसका बराबर ख़याल रखना और सुबह-शाम, यानी दोनों वक्त, आकर बराबर यह पूछ जाया करना कि किस क़िस्म का खाना लाया जाय, और एक शख़्स के लिए लाया जाय, या दोनों के लिए; क्योंकि मै अक्सर अपनी नौकरी पर रहूंगा,—इसलिए कभी इत्तिफ़ाकिया मै यहां खाना खा सकूंगा। लेकिन ये मेरे दोस्त (मेरी तरफ़ इशारा करके) बिल्फ़ेल बेकार हैं, इसलिये इनके वास्ते दोनों वक्त तुम्हें खाना पहुंचाना होगा। तुम्हें कुछ पेशगी रुपए तो दिए ही जा चुके हैं, जिनकी बाज़ाप्ता रसीद भी तुम मुझे दे चुके हो; लेकिन ख़ैर, अगर बीच में तुम्हें कुछ दरकार हो तो मुझसे मांग लेना, वरन कुल हिसाब बेबाक महीने के अख़ीर में किया जायगा। "

मेरे अजनबी दोस्त का इतना लम्बा-चौड़ा जवाब सुनकर वह बावर्ची ज़रा मुस्कुराया और "बहुतख़ूब" कह कर फ़ौरन चलदिया। उसके जाने पर मेरे दोस्त ने मेरी तरफ़ देखा और मुस्कुराकर कहा,—"मैने उस बावर्ची के साथ इतनी बातें इस लिए की थीं कि जिसमें तुम मेरा दिली मक़सद समझ लो; यानी तुम्हें रोज़ जो कुछ दरकार हो, या जो कुछ खाना हो, उसे बेतकल्लुफ़ी के साथ मंगा लिया करना; किसी चीज़ की क़ीमत देने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि उसे कुछ रुपये मैने पेशगी देदिए हैं और बाकी जो कुछ

होगा, महीने के अख़ीर में देदिया जायगा।"

अपने नए और अजनबी नौजवान दोस्त की ऐसी दिलेरी, ऐसी फ़ैयाज़ी और ऐसी दोस्तपरस्ती देखकर मैं हैरत में आगया और कहने लगा,—"दोस्त मन्सूर! तुम तो भई, कोई अजीब बशर हो! तुम्हारी ऐसी ख़ूबी का इन्सान तो मैंने आजतक न देखा!"

यह सुनकर उसने एक क़हक़हा लगाया और कहा,—"यह तो तुम सरासर झूठ बोल रहे हो।"

मैंने ताज्जुब में आकर कहा,—"यह कैसे?"

उसने कहा,—"यह ऐसे, कि आज तो तुमने उस ख़ूबी का आदमी ज़रूर ही देखा!"

उसका यह जवाब सुनकर मैंने भी एक क़हक़हा लगाया। फिर तो घंटे डेढ़ घंटे तक आपस में चुहल की बातें होती रहीं, इसके बाद मेरे दोस्त ने दर्बारी कपड़े पहिने और अपने कमरे की ताली मेरे आगे फेंक कर यों कहा,—"लो, यह मेरे कमरे की ताली है, इसे हिफ़ाज़त के साथ ज़रा छिपा कर रखना और ख़ूब होशियारी के साथ रहना; अपने कमरे का दरवाज़ा भीतर से बराबर बन्द रखना; अगर बाहर सैर के लिये जाना तो ज़ियादा रात तक बाहर ही बाहर न रहना और जहांतक मुमकिन हो, सरे शाम ही डेरे पर वापस आजाना। इस आलमारी में (उंगली से बतलाकर) कई किताबें मौजूद हैं, इनसे अपना दिल बहलाव करना; और सुनो, ज़रा खड़े तो होजाओ—"

यह सुनकर मैं खड़ा होगया, तब मुझे उस अजनबी दोस्त ने कमरे के बाहर लेजाकर और उसी ताली से, जिसे कि उसने मुझे दिया था, उस दर्वाज़े के ताले खोलने और बन्द करने की अजीबो-ग़रीब हिकमत बतलाकर और फिर मेरे साथ कमरे के अन्दर आकर यों कहा,—"इस ताली को हरगिज़ न खोदेना, वर न फिर जबतक मेरे साथ तुम्हारी मुलाकात न होगी तुम इस कमरे के

ताले को किसी दूसरी ताली से हरगिज़ न खोल सकोगे। यह एक ताली तो मैंने तुम्हें दी है, और इसके जोड़ की दूसरी ताली मेरे पास मौजूद है। खैर अब मैं इस वक़्त तुमसे रुखसत होता हूं, क्योंकि मेरी नौकरी का वक़्त अनक़रीब है।"

यों कहकर उसने 'अस्सलाम अलेकुम' किया, जिसके जवाब में मैंने भी 'वालेकुमअस्सलाम' कहा, और फिर तर्फ़ैन से 'खुदा हाफ़िज़-खुदा हाफ़िज़' कहा गया और मेरा दोस्त चलदिया। उसके जाने के बाद मैंने उसके कहे मुताबिक कमरे का दर्वाज़ा अन्दर से बन्द कर लिया और तब उस पुलिन्दे को निकाला, जो उस बोर्क़ेवाली ने मुझे दिया था।

वह पुलिन्दा, जो देखने में तो छोटा था, लेकिन वज़नी था, मैंने अपनी कमर से खोलकर निकाला और ज़रा उसे उलटपलट कर देखने के बाद अपने सामने ज़मीन में रख लिया। फिर कुछ देर तक मैं इस बात पर ग़ौर करता रहा कि वह बोरक़ेवाली औरत कौन है और क्या सबब है कि उसने मेरे साथ ऐसी भलाई की? यह बात मैं कह आया हूँ और फिर भी कहता हूं कि उसकी सूरत कुछ पहिचानी हुई सी मालूम देती है, लेकिन यह मुझे अब तक याद नहीं आया कि मैंने उसे कब, कहांपर, किस हालत में, या कौन से मौक़े पर शाही महलसरा के अन्दर देखा था! इस बात पर मैंने बहुत कुछ ग़ौर किया, लेकिन अबतक मैं उस नाज़नी, यानी बोरक़ेवाली को मुतलक़ नहीं पहिचान सका हूं।

खैर जो कुछ हो, जबकि इस वक्त वह बात मुझे याद ही नहीं आती, तो फिर उसकी ज़िक्र मैं यहीं पर छोड़ता हूं और उस पुलिन्दे को खोलकर देखता हूं, जो कि इस वक़्त मेरे रू-ब-रू मौजूद है।



बारहवां बयान ।

वह पुलिन्दा एक सफेद कपड़े में खूब कसकर बँधा हुआ था, लिहाज़ा, उस कपड़े को मैंने खोल डाला। फिर क्या देखा कि एक निहायत नफ़ीस और खुशरङ्ग दस्ती रूमाल में वह पुलिन्दा लपेटा हुआ है! ख़ैर, मैने उस रूमाल को भी खोल लिया और उलट-पुलट कर उसे देखा तो क्या देखा कि उसके एक कोने में ज़री से एक खुशख़त जुम्ला निहायत खूबी के साथ बनाया गया है, जो यह है-

" यह रूमाल सिर्फ़ आप ही के वास्ते है।"

नाज़रीन, बस उस रूमाल के एक कोने में ज़री के काम का जो जुमला बनाया गया था, वह यही है, जिसे मैने ऊपर दर्ज कर दिया है। अब और तमाशा देखिए,—

रूमाल के बाद एक और सफ़ेद कपड़ा दिखलाई दिया, जो डोर से खूब मज़बूती के साथ जकड़ा हुआ था। ख़ैर, मैंने डोर खोल डाली और उस कपड़े के हटाने बाद उसके अन्दर से जो कुछ चीज़ें मैंने पाईं, वे ये हैं,—दो ख़ञ्जर, दो छोटी-छोटी पिस्तौलें, सौ अशर्फ़ियां और एक ख़त!

नाज़रीन, यह बात खुद कयास कर सकते होंगे कि इन चीज़ों को, जिनकी कि मुझे इस वक्त सख़्त ज़रूरत थी, देखकर मेरे दिल में कैसे कैसे ख़याल पैदा हुए होंगे! लेकिन ख़ैर, इस वक्त मैं ख़याली पुलाव नहीं पकाना चाहता और जो कुछ इस क़िस्से के मुतल्लिक़ मुझे लिखना है, वही यहां पर लिखता हूं,—

यह बात शायद नाज़रीन भी समझ सकते होंगे कि बिलफ़ेल मुझे रुपयों और हथियारों की सख़्त ज़रूरत थी, पस, जिस शख़्स ने मुझे ये चीज़ें बख़्शीं, और साथ ही इसके, मेरी जान भी बचाई, वह मेरा कितना बड़ा ख़ैरख़्वाह होगा, और उसकी ऐसी अजीबो-ग़रीब कार्रवाइयों को देखकर मेरा दिल उसकी तरफ कितना

मुखातिब हुआ होगा, इसे नाज़रीन खुद समझ सकते हैं ! अलाहाज़ुल-क़यास, अब मैं उस ख़त को खोलकर देखता हूं, कि उसमें क्या लिखा हुआ है !

अल्हम्दु-लिल्लाह, प्यारे नाज़रीन ! भई, क़सम परवरदिगार की; मैं उस अपनी पुरानी मिहर्बान, और खैरख़्वाह, या बिहतरी चाहनेवाली बोरक़ेवाली को बिलकुल पहिचान गया !!!

अल्लाह-आलम ! मैं नहीं जानता था, कि वह छबीसी ऐसी आफ़त की परकाला है और इस क़दर मेरी मुहब्बत का दम भरने पर भी मुझे यों हैरान व परीशान कर रही है ! ख़ैर, मैंने समझ लिया कि जबतक वह मेरी दिलरुबा दिलाराम को मेरे रू-ब-रू लाकर खड़ी न कर देगी, मुझसे ज़ाहिरा तौर पर मुहब्बत-आमेज़ गुफ़्तगू हर्गिज़ न करेगी; बल्कि यों छिपे-छिपे मुझपर लगातार अहसान पर अहसान करती चली जायगी, ता कि ताक़यामत मैं उसके सामने सर न उठा सकूं ! ख़ैर, जो कुछ होगा, देखा जायगा; लेकिन, प्यारे नाज़रीन ! मैं आपसे इसलिये माफ़ी चाहता हूं, कि अगर उस बोरक़ेवाली का ख़त मैं अभी आपके सामने पेश कर दूंगा, तो इस क़िस्से का सारा मज़ा ही किरकिरा होजायगा और बिलकुल लुत्फ़ जाता रहेगा; चुनांचे आप मुझे माफ़ करेंगे, क्योंकि अभी मैं उस ख़त को, या उस ख़त के लिखनेवाली को आपके रू-ब-रू पेश नहीं किया चाहता; हां, इस बात का मैं वादा करता हूं कि मौक़े के साथ ये दोनों ही आपके रू-ब-रू आजायंगे और उस वक़्त आपको भी शायद उतनी ही ख़ुशी हासिल होगी, जितनी कि इस वक़्त मुझे दस्तयाब हुई है। लेकिन हां, उस ख़त में मेरे लिये जिन बारह बातों की हिदायतें की गई हैं, उन्हें मैं नीचे दर्जकर देता हूं,—

(१) जब तक मैं ख़ुद न मिलूं, मेरा पीछा न करना।

(२) इस वक़्त तमाम दुनियां में अगर कोई तुम्हारा जानी दुश्मन है, तो वह   है पस, उससे हमेशा होशियार

रहना, और अगर काश कोई ऐसा मौक़ा तुम्हारे हाथ आजाय तो तुम बिला-ताम्मुल उसे मार डालना। उस वक़्त इस बात का हर्गिज़ ख़याल न करना कि, 'यह औरत है;' वजह इसकी यह है कि अगर तुम उसे न मार डालोगे, तो वह इस दुनियां में तुम्हें बहुत ज़ियादा दिन तक ज़िन्दा न रहने देगी। वजह इसकी यह है कि तुमने उसके बेटे नज़ीर का ख़ून किया है।

[३] तुम जहाँ और जिस हालत में रहोगे, मुझसे छिपे न रहोगे और मुझे अपनी मदद पर हर वक़्त मौजूद पाओगे; लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि तुम आज़ादी और लापरवाही के साथ इधर-उधर घूमना-फिरना शुरू करदो; बल्कि मेरा तो यह इरादा है कि तुम अभी कुछ दिनों तक अगर अपने तईं छिपाए हुए जहां के तहां दबे-दबाए बैठे रहो तो बहुत ही अच्छा हो; लेकिन इतना अगर तुम गवारा न कर सको, तो खञ्जर और पिस्तौल के साथ दिन को सरा के बाहर होना और शाम होने के पेश्तर ही अपने डेरे पर पहुंचजाना। इस मौक़े पर अगर कोई ख़तरा नज़र आए तो मेरे दिए हुए हथियारों से हत्तुलमक़दूर अपनी हिफ़ाज़त करना; आगे,—' होता है वही जो मञ्जूरे ख़ुदा होता है।'

[४] न तो किसीके साथ नई दोस्ती पैदा करना और न दुश्मनी ही; साथ ही इसके—न तो किसी पर भरोसा करना और न किसी पर अपना राज़ ही ज़ाहिर करना।

[५] उस बावर्ची पर यक़ीन करना, लेकिन सिवाय ज़रूरियात के—और किसी क़िस्म की बातें उससे हर्गिज़ न करना, और न कभी कोई सवाल ही करना। वह भी तुमसे सिवाय मामूली बातें करने के, ज़ियादा गुफ़्तगू न करैगा, बस तुमभी उसके साथ वैसा ही बर्ताव करना।

[६] मुझसे मिलने के लिये कोई तरद्दुद न उठाना, क्योंकि वक़्त ज़रूरत पर मैं ख़ुद-ब-ख़ुद तुम्हारे पास पहुंच जाऊंगी। तुम इसे यक़ीन कर मानो कि मैं तुम से दूर नहीं हूं।

[७] अपनी दिलरुबा दिलाराम के लिये तुम ज़रा भी फ़िक्र, तरद्दुद, ग़म, या अफ़सोस न करना। यह बात खुदा को दर्म्यान में डालकर तुमसे बिलकुल सही कही जा रही है कि उसे तुम ज़रूर पाओगे, लेकिन ज़रा अर्से में। हां, यह ज़रूर है कि वह भी तुम्हारी जुदाई में बहुत ही ग़मग़ीन रहा करती है, लेकिन उसे तुम्हारी जुदाई के सिवाय और कोई तकलीफ़ नहीं है। यहां पर यह बात भी तुमसे कह देना बहुत ज़रूरी है कि दिलाराम की पाकदामनी मे तुम कोई शक व शुबहा हर्गिज़ न करना।

[८] ज़रा लियाक़तहुसैन और उसके ग़ुलाम हुसैनी से भी होशियार रहना।

[९] अब उस मसजिद की जानिब, जहांसे कि तुम लियाक़त हुसैन के हाथ में पड़गए थे, कभी जाने का क़स्द न करना। और उस महल्ले में भी न जाना, जिसमें लियाक़त हुसैन का मकान है; क्योंकि वह तुम्हारी ताक में लगा हुआ है।

(१०) अब उस मुक़ाम पर भी तुम्हारा जाना अच्छा नहीं है, जिस मुक़ाम पर से कि तुम महलसरा के अन्दर पहुंचाए गए थे; क्योंकि वहां पर आसमानी ने अब पहरे बिठला दिए हैं।

(११) महल्ले ' दिलकुशा ' की क़साईवाली गली में आसमानी का मकान है, चुनांचे उस तरफ़ भी तुम्हारा जाना अच्छा न होगा।

(१२) गो, मैं हरवक़्त तुम्हारे पास हूं, लेकिन फिर भी अगर तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो तुम एक रुक्क़ा लिखकर उसे अपनी चारपाई पर, तकिये के नीचे, रख देना। बस, दूसरे रोज़ उसी जगह पर तुम अपने पर्चे का जवाब पाजाओगे, या मांगी हुई चीज़ मौजूद देखोगे।

प्यारे, नाज़रीन ! उस ख़त का सिर्फ़ उतना ही हिस्सा आप लोगों के रू-ब-रू पेश कर दिया गया है, जिसमें कि ऊपर लिखी हुई बारह हिदायतें दर्ज थीं। रहा बाक़ी का हिस्सा वह भी किसी

मौक़े पर आपकी नज़र किया जायगा।

अब आपको अख़्तियार हासिल है कि इन हिदायतों को पढ़कर जो कुछ आपके दिल में आए, वह अन्दाज़ा करते रहें।

क़िस्साकोताह, मैंने उस ख़त को कई मर्तबा पढ़ा, इसके बाद उसके रेज़े रेज़े करके जला डाला; क्योंकि हुक्के के सामानों में चकमक पत्थर और गन्धक की दियासलाई भी मेरे कमरे में मौजूद थी। इसके बाद मैंने वह कमरा खोला, जो मेरे अजनबी दोस्त मन्सूर का था। उसके अन्दर जाकर मैंने देखा कि वह भी हरएक ज़रूरियात की चीज़ों से बख़ूबी आरास्ता है। ख़ैर, मैंने उन अशर्फ़ियों को उस कमरे के अन्दर वाली एक आलमारी में रख दिया, जिसमें कि मेरे दोस्त मन्सूर का एक बड़ा सा सन्दूक रक्खा हुआ था। उस सन्दूक को मैंने उठाकर जांचा तो मालूम हुआ कि दरअसल वह बहुत ही वज़नी है! ख़ैर, फिर मैंने वह कमरा उसी ताली से बन्द कर दिया। इसके बाद मैं बीचवाले कमरे की एक आलमारी में से एक किताब लेकर अपने पलङ्ग पर जा लेटा, लेकिन तरह-तरह के ख़यालों ने उस वक़्त मुझे ऐसा परीशान कर रक्खा था कि किताब में ज़रा भी तबीयत न लगी। योंहीं जब दिन थोड़ा बाक़ी रह गया, तो मैंने चाहा कि ज़रा इधर-उधर टहल-घूम आऊं; लेकिन उन हिदायतों का ख़याल हो आया, इस लिये मैं अपने कमरे से बाहर न हुआ।

शामके वक़्त जब मैंने चिराग़ रौशन किया, तब बावर्ची खाना लेकर आया, और उसने मेरे कमरे का दर्वाज़ा खटखटाया, तो मैंने उठकर दर्वाज़ा खोल दिया। उसके बाद वह कमरे में आकर और एक क़रीने से खाने को रखकर यों कहता हुआ चला गया कि,—'जूठे बर्तन सुबह उठा लेजाऊंगा।'

मैंने चाहा कि उस बावर्ची से कुछ बातें करूं, लेकिन उस ख़त की उन हिदायतों का ख़याल हो आने से मैं ख़ामोश रहा।

तेरहवां बयान।

उसके जाने के बाद मैंने फिर बदस्तूर दरवाज़ा बन्द कर लिया और उसी किताब को खोलकर देखना शुरू किया। वह एक निहायत दिलचस्प क़िस्सा था और नाम उसका 'अजायब-उल्-मख़लूक़ात' था। उसमें ख़ुदावन्दकरीम के अजीबो ग़रीब कारख़ानों का निहायत ख़ूबी के साथ बयान किया गया था, और यह बात माकूल बहस के साथ अच्छी तरह समझाई गई थी कि यह दुनियां क्या शै है, और यहां आकर इन्सान को क्या करना चाहिए। गो, यह क़िस्सा निहायत दिलचस्प था, लेकिन जबतक ख़ूब दिल लगाकर इसे न देखा जाय, इसकी बारीकियां समझ में आही नहीं सकतीं। ख़ैर, मैंने ख़ूब दिल लगाकर उसे पढ़ना शुरू किया और लगातार दो-तीन घंटे तक बराबर वही सिलसिला ज़ारी रक्खा। रात एक पहर से ज़ियादा गुज़र चुकी थी, ऐसे ही वक़्त में मेरे कानों ने एक छोटे पटाखे की सी आवाज़ सुनी! उस आवाज़ के सुनते ही मैंने किताब तो फ़ौरन उठाकर रख दी और उस आवाज़ पर ग़ौर करना शुरू किया।

नाज़रीन, यह सुनकर ताज्जुब करेंगे,—और है भी यह हैरतअंगेज़ बात,—यानी वह पटाखे की आवाज़ उस कमरे के अन्दर से आई थी, जो मेरे नए दोस्त मन्सूर ने अपने लिये मुक़र्रर किया था! मैं देर तक कान खड़े किए हुए आहट लेता रहा, लेकिन फिर कुछ न सुनाई दिया। ख़ैर, मैंने उस तरफ़ से अपना ख़याल हटा लिया और दस्तरख़ान पर जा बैठा। भूख भी ख़ूब लगी हुई थी, और खाना भी निहायत उम्दा, नफ़ीस और ताज़ा था, इसलिये फिर मैंने ताम्मुल न किया और ख़ूब तसल्ली के साथ खाना शुरू किया। योंही धीरे-धीरे ज़ायक़े के साथ खाना खाने में मैंने एक घंटे से ज़ियादा वक्त सर्फ कर दिया इसके बाद हाथ मुंह धो और दो चार

गिलौरियां चबा कर जैसे ही मैंने वह किताब हाथ में ली, कि वैसे ही फिर उसी क़िस्म की आवाज़ उस कमरे के अन्दर से आई !

अब मैं अपने तईं सम्हाल न सका और चट ताली लेकर उस कमरे का दर्वाज़ा खोलने लगा; लेकिन यह क्या ! अल्लाह, यह क्या ! प्यारे, नाज़रीन ! बात यह थी, और बड़े ताज्जुब की थी, कि मैंने हरचन्द सिर मारा और सैकड़ों बार ताली घुमाई, लेकिन वह दर्वाज़ा किसी तरह पर न खुला ! ! ! मज़ा तो यह था कि ताली, बग़ैर रुकावट के, बराबर घूमती चली जाती थी, लेकिन ताला किसी तरह भी नहीं खुला ! मैंने उलटी-सीधी हर तरह से बराबर ताली घुमाई, लेकिन इसका नतीजा कुछ भी न निकला ! आख़िर, लाचार होकर मैंने ताली निकाल ली और इस अमर पर ग़ौर करने लगा कि यह वजह क्या हुई कि जो ताला नहीं खुलरहा है !

मैं इन्हीं बातों पर ग़ौर करता हुआ हैरान व परीशान होरहा था कि इतने ही में उसी कमरे के अन्दर से क़हक़हे की आवाज़ आई ! वह आवाज़ एक शख़्स की नहीं, बल्कि दो शख़्सों के हंसने की थी ! मैं यह अजीब तमाशा देखकर बहुत ही हैरान हुआ और सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए ! लेकिन मैं कुछ भी कर-धर न सका; वजह इसकी यह थी कि उस कमरे का दर्वाज़ा मैं किसी तरह भी नहीं खोल सका था।

आख़िर, योंही रात आधी से ज़ियादा गुज़र गई और उसी बीचवाले कमरे में, जिसमें कि मैंने खाना खाया था, या जो बैठने-उठने के वास्ते था, फ़र्श के ऊपर ही मैं कब सोगया, इसकी मुझे कुछ भी ख़बर न रही।

सुबह के वक़्त जब मेरी नींद खुली तो मैंने जाना कि दिन एक घंटे से ज़ियादा चढ़ आया है। ख़ैर, मैं मामूली कामों से फ़ारिग़ होकर उस किताब का वर्क़ खोला ही चाहता था कि मेरे कमरे का दरवाज़ा खटखटाया गया। मैंने फ़ौरन उठकर दर्वाजा खोल

दिया और उसी बावर्ची ने कमरे के अन्दर आ और अपने बर्तन वगैरह समेट कर मेरी तरफ़ बगैर देखे ही पूछा,—"क्या चीज़ें दरकार हैं?"

मैंने कहा,—"चीज़ें तो कोई न चाहिएं; हां, खाना बदस्तूर दस बजे तक पहुंचादेना।"

यह सुन और "जो हुक्म" कहकर वह बावर्ची चला गया और मैंने किताब को देखना शुरू किया। किताब देखते-देखते मेरे दिल में यह ख़याल आया कि,—आह मेरे पास जो कुछ रुपये-पैसे थे,—यानी जो कि मन्सूर और उस औरत वाली से मुझे मिले थे, वे सभी तो मैंने मन्सूर वाले कमरे के अन्दर रखदिए हैं; और उसका अब दर्वाज़ा ही नहीं खुलता! पस, मैं अब क्या करूंगा, और काश अगर रुपए-पैसे की कोई ज़रूरत आपड़ेगी, तो वह क्योंकर रफा की जा सकेगी!

इस बात का ख़याल आते ही फिर मेरा दिल किताब में ज़रा न लगा और उसे रखकर मैं उठ खड़ा हुआ और कमरे में चहल-क़दमी करने लगा। देर तक मैं यों ही तरह-तरह के ख़यालों में उलझा रहा; इतने ही में मेरे दिल में यह आया कि भला, देखूं तो सही कि इस कमरे का ताला क्यों नहीं खुलता!

ग़रज़, मैंने वह ताली निकाल कर उस ताले में लगाई और ज्योंही उसे घुमाया कि चट उस कमरे का दर्वाज़ा खुल गया! यह अजीब तमाशा देख कर मैं निहायत हैरत में आगया, और कमरे के अन्दर घुसा। भीतर जाकर मैंने क्या देखा कि उस कमरे के अन्दर जितनी चीज़ें थीं, वे कुल अपनी जगह पर बदस्तूर मौजूद हैं और मेरे रुपए-पैसे भी ज्यों के त्यों उसी तरह रक्खे हुए हैं, जिस तरह कि वे धरे गए थे! यह अजीब कैफ़ियत देखकर मैंने उस कमरे का एक-एक कोना ढूंढ डाला, लेकिन इस बात का पता मुझे हर्गिज़ न लगा कि, 'इस कमरे के अन्दर आने के लिये कोई पोशीदा

रास्ता कहीं पर मौजूद है !'

क़िस्साकोताह, मैंने अपने रुपयों में से कुछ थोड़े से रुपये निकालकर अपनी ज़ेब में रक्खे और उस कमरे का दर्वाज़ा बदस्तूर बन्द कर दिया।

इस काम से फ़ुर्सत पाकर ज्योंही मैं किताब उठाया चाहता था कि बावर्ची के आने की आहट मालूम हुई। आख़िर, मैंने दर्वाज़ा खोल दिया और जब खाना रखकर वह चला गया, तब मैंने खाना शुरू किया। खाना खाने के बाद मैंने कई गिलौरियां चबाईं, और फिर इस बात पर ग़ौर करना शुरू किया कि, 'अल्लाह, मैं इस कमरे में क़ैदी के मिसाल बन्द रहकर कबतक अपना गुज़ारा कर सकूंगा ! गो, मुझे इस कमरे से बाहर होने की मनाई की गई है, लेकिन इस तरह पिंजड़े में बन्द रहकर इन्सान कबतक ज़िन्दा रह सकता है ! चुनांचे अब तो खुदा का नाम लेकर मैं इस कमरे या क़फ़स से बाहर होता हूं,—आइन्दा जो उसकी मर्ज़ी होगी, वही होगा; बक़ौल शख़्से कि,—'वही होता है, जो मञ्ज़ूरे खुदा होता है।'

नाज़रीन ! आप खुद सोच सकते हैं कि इस एकताई की हालत में उस सूनसान कमरे के अन्दर मैं कबतक गुज़ारा कर सकता थो ! और उस हालत में, जबकि उस नए दोस्त मन्सूर का भी कुछ पता-ठिकाना न था ! वह कल से जो गया है, सो अबतक नहीं लौटा ! ऐसी हालत में मैं अब कहांतक उसका इन्तज़ार करूं, या क्योंकर तनहा इस कमरे के अन्दर बन्द रहा आऊं !

ग़रज़, इसी क़िस्म की बातें सोच-साच-कर मैं उठ खड़ा हुआ और कपड़े बदलने लगा। फिर मैंने दोनों ख़ञ्जर कमर में खोंसे, दोनों पिस्तौलें चोग़े के अगल-बग़ल वाली दोनों ज़ेबों में रक्खीं और रुपए अंटी में लगाए। इसके बाद जूते पहिन और उस पाक परवर्दिगार का नाम लेकर मैं अपने कमरे से बाहर हुआ।

चौदहवां बयान ।

बाहर से उसका ताला ठीक तौर से बन्दकर और ताली खूब हिफ़ाज़त के साथ अपने पास रख, मैं ज़ीने से नीचे उतरने लगा। बराबर ज़ीने उतरता हुआ मैं नीचे वाले सहन में पहुंचा और एक बेर चारो तरफ़ नज़र दौड़ाकर उस फाटक से बाहर हुआ, जो गोमती की जानिब वाले फाटक के ठीक सामने सड़क की तरफ़ पड़ता था। अल्ग़रज़, इधर-उधर देखता-भालता और बाज़ारों की सैर करता हुआ मैं मीनाबाज़ार में जापहुंचा और फिर वहां से जौहरीबाज़ार की तरफ़ मुड़ा।

उस चौमुहानी पर भीड़ कसरत से होरही थी, इसलिये मैं वहां पर ज़रा रुका और यह बात दर्याफ़्त करने के लिये एक शख़्स की तरफ़ मुख़ातिब हुआ। मैं उससे कुछ पूछा ही चाहता था कि वही बावर्ची, जो मुझे खाना पहुंचाया करता था, मेरे सामने आ खड़ा हुआ, और मेरे दिल के अन्दर की बात जानकर यों कहने लगा,—"जनाब, एक बाज़ीगर तमाशा कर रहा है, उसीकी यह भीड़ है।"

इतना कहकर वह एक तरफ़ को चल खड़ा हुआ और मैंने भी फिर वहां पर फ़ज़ूल ठहरना मुनासिब न समझकर एक तरफ़ का रास्ता पकड़ा।

यों ही घूमता-फिरता जब मैं चौक में पहुंचा, उस वक़्त शाम अनक़रीब थी। आख़िर, मैंने एक तमोली की दूकान पर जाकर चार बीड़े पान खाए और पैसे उसके हवाले कर अपने डेरे का रास्ता लिया।

मैं चन्द ही क़दम आगे बढ़ा होऊंगा कि किसीने पीछे से मेरे कन्धे पर हाथ रक्खा! यह जानकर मैं यक-ब-यक चिहुंक उठा और फ़ौरन घूम कर मैंने क्या देखा कि मेरा नया दोस्त मन्सूर

खड़ा-खड़ा मेरी जानिब देख-देख-कर मुस्कुरा रहा है !

मैंने उसे देखते ही बड़ी खुशी के साथ उसका हाथ पकड़ लिया और हंसकर कहा,—"क्या खूब ! वाह दोस्त, तुम तो वल्लाह, जो गए, सो गए ! "

उसने कहा,—"लेकिन आए भी कैसे मौक़े पर ! "

मैंने कहा,—"भई, क़सम खुदा की, तुम्हारी जुदाई में मेरा दिल इस क़दर बेक़रार हुआ कि तनहाई के आलम में डेरे पर एक लहज़ा भी ठहरना दुश्वार हुआ; पस खाना खाने के बाद, यानी ठीक दोपहर के वक्त से, जो मैं घूमने निकला हूं, सो अबतक बराबर इधर-उधर की ख़ाक छानता हुआ फिर रहा हूं ! मैं अब डेरे को जाही रहा था कि यक-ब-यक तुम न जाने किधर से आ टपके !"

मेरी लम्बी-चौड़ी बातें सुनकर मन्सूर ने हंसकर कहा,—"अल्लाह आलम ! तुम मेरे वास्ते इस क़दर बेक़रार हुए ! "

मैंने कहा,—"हां, भई, क़सम खुदा की, इसमें तुम ज़रा शक न करना । "

यह सुनकर उसने एक क़हक़हा लगाया और कहा,—"क्या खूब ! अजी वल्लाह, तुमने मुझे क्या कोई नाज़नी समझ रक्खा है कि मेरी जुदाई में तुम इतने बेक़रार हुए ! "

उसकी इस बेतुकी बात को सुनकर मुझे भी ज़रा दिल्लगी सूझी और मैंने हंसकर कहा,—"वल्लाह, तुम क्या किसी नाज़नी से कम हो ! मैं तो समझता हूं कि नाज़नीनों की तो हक़ीक़त ही क्या,—अगर कोहे-क़ाफ़ की परियां भी तुम्हारे नाज़ोनख़रे को देखें तो सदक़े होजांय ! "

मेरी इस दिल्लगी को सुनकर मन्सूर ने मेरे हाथ को भरज़ोर दबाया और खूब ज़ोर से हँसकर यों कहा,—"अल्लाह आलम ! तुमने तो मियां, यूसुफ़ ! गज़ब किया और अपनी दिलरुबा दिलाराम की जगह मुझे इनायत की ! मगर ख़ैर, अब यह तो बताओ कि

इस वक्त तुम सीधे डेरे पर चलोगे, या अभी कुछ देरतक और इधर-उधर की धूल उड़ाओगे ? "

मैंने कहा,—"तुम्हारे इस सवाल का खुलासा मतलब क्या है ? "

उसने कहा,—" मतलब सिर्फ़ यही है कि मैं अब ज़ियादा देरतक यहां नहीं ठहर सकता; क्योंकि मैं अपने मालिक के एक ज़रूरी काम से इधर जा रहा था कि तुम्हें देखकर ठहर गया; लिहाज़ा, अगर तुम अपने डेरे पर चलना चाहते हो तो मेरे हम-राह चलो; मैं तुम्हें डेरे पर पहुंचा कर अपने मालिक के काम को चला जाऊंगा। "

मैंने कहा,—" तो क्या आज भी तुम डेरे पर न आओगे ? "

उसने कहा,—" नहीं, मैं अभी शायद दो-चार रोज़ तक डेरे पर न आसकूंगा। वजह इसकी यह है कि मेरे नए मालिक ने मुझपर एतक़ाद करके मुझे अपने ख़ज़ाने की निगरानी सौंपी है, और वे शाही काम से बाहर तशरीफ़ लेगए हैं। पस, जबतक वे वापस न आजायंगे और मेरी ख़लासी न होजायगी, मैं डेरे पर कैसे आसकता हूं ? "

गरज़, योंहीं दो-चार इधर-उधर की बातें करने के बाद हम दोनों इक्के पर सवार हुए और आध घंटे के अन्दर-अन्दर सरा में आ दाख़िल हुए। फिर तो मैं मन्सूर को ज़बर्दस्ती अपने साथ ऊपर कमरे में लेगया; इतने ही में वह बावर्ची खाना भी ले आया। ग़रज़, हमदोनों ने बड़ी ख़ुशी के साथ खाना खाया और बाद इसके मन्सूर चला गया। उससे मैंने रात का वह हाल बिल्कुल नहीं कहा और न यही कहा कि,—'रात को तो तुम्हारे कमरे का ताला नहीं खुला था, लेकिन सुबह को बिला तरद्दुद खुल गया।' ख़ैर, उसके जाने के बाद कुछ देरतक तो मैं वही किताब देखता रहा, लेकिन जब रात आधी के क़रीब पहुंची, तब सो रहा। आज उस कमरे के अन्दर से किसी क़िस्म का खटका वग़ैरह नहीं सुनाई दिया था

पंद्रहवां बयान ।

मैं अपने मिहर्बान नाज़रीन से यहां पर एक गुज़ारिश करना चाहता हूं। वह यह है कि आपलोग एक सायत से मेरी "सवानः उम्री" का बयान सुनते चले आरहे हैं। इसमें अबतक आपलोगों ने जो कुछ दिलचस्पी पाई होगी, वह तो आपलोगों का दिल ही जानता होगा; लेकिन अगर सच पूछिए तो ख़ास मेरी दिलचस्पी इस 'सवानह उम्री' में कुछ भी नहीं है। वजह इसकी यह है कि मेरी दिलरुबा मुझसे दूर कर दी गई है और मैं एक अजीब उलझन में फंसा दिया गया हूं। अलाहाज़्-उल-क़यास, अबतक जो कुछ मैंने लिखा,—क़सम ख़ुदा की, उसमें, गो, मेरी दिलचस्पी बिलकुल नहीं है, लेकिन अगर आपलोगों का दिल इस ग़मज़दे की इस दर्दअङ्गेज़ दास्तान में लगा हो, तो ख़ैर, जो कुछ मुझ पर गुज़र गई, वह तो मैं सुनाही चुका हूं,—और आइन्दा भी जो कुछ गुज़रेगी, वह भी बराबर सुनाता चलूंगा; लेकिन इस बात को मैं शुरू ही में क़सम खा चुका हूं कि इस क़िस्से में मैं जो कुछ लिखूंगा, बिल्कुल सही-सही हाल बयान करूंगा; चाहे उसमें किसी क़िस्म की दिलचस्पी हो, या न हो।

क़िस्सा कोताह, आज हफ़्ते से मेरे नए दोस्त मियां मन्सूर अली का बिल्कुल पता नहीं है। उसके बारे में मैंने दो-एक रोज़ उस लौंडे बावर्ची से भी बहुत कुछ दर्याफ़्त किया, लेकिन सिवा मुस्कुरा देने के, और उसने कुछ भी माकूल जवाब न दिया। मैं हैरान व परेशान था कि वह बेचारा किस काम में ऐसा उलझा हुआ है कि आज एक हफ़्ते के क़रीब होता आता है, मुझे उसको न तो कोई ख़बर ही मिली, और न उसका दीदार ही नसीब हुआ! जिस शख़्स, यानी शाही दर्बार के वज़ीर आज़म के मीरमुन्शी के यहां नौकर होने की बात उसने बतलाई थी, एक तो उस शख़्स

का मैं नाम ही भूलगया हूं,—और बग़ैर जाने समझे वज़ीर के दरे-दौलत तक जाने की मेरी हिम्मत ही नहीं होती ! मगर ख़ैर, मैं ख़ुदावन्दकरीम की ख़िदमत में यही गुज़ारिश करता हूं कि मेरा वह नेकख़सलत व मिहर्बान दोस्त हर बलाओं से दूर रहे और उसका दीदार मुझे जल्द नसीब हो !

ग़रज़, यों हीं मैं देरतक अपने उसी अजनबी दोस्त के बारे में तरह-तरह की बातें सोचता रहा। इसके बाद उसी किताब को देखने लगा, लेकिन बिल्कुल बेफ़ायदा हुआ; क्योंकि उसमें मेरा ज़रा दिल न लगा और वह उठाकर रख दी गई।

यह ज़िक्र कोई दिन के दो बजे के क़रीब की होगी,—ठीक इसी वक़्त मेरे कमरे के दर्वाज़े को किसीने बाहर से खटखटाया, जिसकी आहट पर उठकर मैंने दर्वाज़ा खोल दिया।

दर्वाज़ा खुलने के साथ ही एक चिट्ठीरसा ने मेरे आगे एक ख़त फेंक दिया और अपनी राह ली। मैंने उसको पुकारा और यह पूछा भी कि,—'यह ख़त किसने भेजा है;' लेकिन उसने इसका कोई भी जवाब न दिया और न वह लौटकर आया ही। आख़िर, मैंने दर्वाज़े को भीतर से बन्द कर लिया और अपनी जगह पर आ और बैठकर उस ख़त को उलट-पुलट-कर देखा। वह एक बिल्कुल सादा लिफ़ाफ़ा था और उसपर किसीका भी नाम नहीं लिखा था !

यह देखकर मैं बहुत ताज्जुब करने लगा और सोचने लगा कि यह किसका ख़त है, किसने लिखा है, किसको भेजा है, और इसपर सरनामे की जगह ख़ाली क्यों छोड़ दी गई है !

वह लिफ़ाफ़ा देरतक मेरी नज़र के सामने उलटा-पुलटा गया, बाद इसके, उसे चाक कर मैंने उसके अन्दर से एक काग़ज़ निकाला; लेकिन अल्लाह ! यह क्या ! यह कैसी दिल्लगी है ! यह किसका मज़ाक है ! इस तरह किसने मेरे साथ मसख़री की !!!

नाज़रीन ! इस बात को सुनकर शायद आपलोग भी बग़ैर हँसे न रहेंगे कि वह ख़त भी लिफ़ाफ़े के मिसाल बिल्कुल सादा, यानी बग़ैर लिखा हुआ कोरा काग़ज़ था ! लेकिन हां, उसमें एक छोटीसी ताली ज़रूर लपेटी हुई थी ! ! ! मगर इस कोरे लिफ़ाफ़े और सादे काग़ज़ का क्या मतलब था, या इसमें जो ताली थी, वह किस ग़रज़ से मेरे पास भेजी गई थी, यह बात मेरी समझ में मुतलक़ न आई ! मगर ख़ैर—

चाहे यह दिल्लगी किसीकी जानिब से की गई हो, और चाहे इस कार्रवाई से किसीने अपना दिल खुश किया हो, लेकिन मुझे इस बेहूदा हरकत पर निहायत गुस्सा आया और मैने उस ख़त व लिफ़ाफ़े को ठोकर मारकर दूर फेंक दिया; लेकिन हां, उस ताली को ज़रूर अपने पास हिफ़ाज़त के साथ रख लिया।

इस वाहियात-खुराफ़ात को देखकर मेरी तबीयत निहायत रञ्जीदा हुई और फिर मैं उस कमरे में ज़रा न ठहर सका। मैने कपड़े बदले और कमरे से निकल और उसका दर्वाज़ा बदस्तूर बन्द कर मैं ज़ीने की तरफ़ गया। मैं कई ज़ीने उतरकर जब ज़ीने के मोड़ पर पहुंचा तो मुझे ऐसा मालूम हुआ कि कोई शख़्स बग़ल की एक कोठरी से निकला, लेकिन मुझे देखते ही वह फ़ौरन उस कोठरी के अन्दर हो लिया और तुरत दर्वाज़ा बन्द होगया ! गो, ज़ीनेपर कुछ अंधेरा था, इसलिये यह मैं ठीक-ठीक नहीं पहिचान सका कि वह शख़्स कौन था; लेकिन इतना मैं ज़रूर कह सकता हूं कि मुझे वह शख़्स बिल्कुल उस लौंडे बावर्ची सा मालूम पड़ा था !

ख़ैर, मैने उस बात पर कुछ भी ध्यान न दिया और मैं बराबर ज़ीना उतरता हुआ नीचे सहन में पहुंचा; लेकिन अल्लाह ! मैं क्या देखता हूं कि वही लौंडा बावर्ची बावर्चीख़ाने के दर्वाज़े पर खड़ा हुआ है ! ख़ैर, फिर मैने यह सोचकर उस ख़याल को अपने दिल

से दूर कर दिया कि वह सीढ़ी-पर-वाला शख़्स कोई और होगा !

मेरा यह रोज़मर्रे का क़ायदा था कि मैं तीसरे पहर हवाख़ोरी के लिये निकलता और शाम होते-होते डेरे पर वापस आजाया करता था। आज भी मैंने वैसा ही किया और शाम होते-होते मैं सरा में लौट आया।

मैंने कमरे के अन्दर आकर और दर्वाज़ा बदस्तूर बन्द करके शमादान रौशन किया और उसके आगे वही किताब ले बैठा। इतने ही में मेरी नज़र उस लिफ़ाफ़े और काग़ज़ पर गई, जिसे मैंने दिन के वक़्त ठुकराकर दूर कर दिया था।

लेकिन नाज़रीन ! इस वक़्त उस लिफ़ाफ़े और काग़ज़ को देखकर मैं हैरत में आगया और चट उन दोनों को हाथ में लेकर देखने लगा।

आप चाहे यक़ीन करें या न करें; लेकिन मैं यह बात क़स्मियां कहता हूं कि ये दोनों लिफ़ाफ़े और काग़ज़ वेही हैं, जिन्हें मैंने आज कई घंटे पहिले पाया था; लेकिन बड़े ताज्जुब की बात है कि जो लिफ़ाफ़ा और काग़ज़ दिन के वक्त बिल्कुल सादे थे, वे इस वक़्त निहायत ख़ुशरङ्ग नीली रौशनाई से लिखे हुए नज़र आरहे हैं और उनकी लिखावट इस बात का साफ़ इज़हार दे रही है कि यह ख़त या इसका लिफ़ाफ़ा किसी नाज़नी के नाज़ुक हाथों का लिखा हुआ है !

यह अजीब कैफ़ियत देखकर मैं देरतक सन्नाटे के आलम में गिरफ्तार रहा और एक सायत तक इसी अम्र पर ग़ौर करता रहा कि इस बन्द कमरे के अन्दर कौन नाज़नी आई, जो इस लिफ़ाफ़े और काग़ज़ को अपने ख़ुशख़त से ज़ीनत बख़्श गई ! इसी वक़्त यकायक मेरा ध्यान उस रात के उस क़हक़हे की तरफ़ गया, जो कि मन्सूर के कमरे के अन्दर सुनाई दिया था। मैंने उस वक़्त यही तसौवर किया कि मेरी ग़ैर-मौजूदगी में मुमकिन है कि इस अजीब तिलस्मी कमरे के अन्दर से निकलकर उसी क़हक़हे वाली नाज़नी ने इसे लिख डाला हो !

सोलहवां बयान।

ख़ैर, जो कुछ हो; मतलब यह है कि उस फ़जूल बात पर मैंने ज़ियादा ध्यान न दिया, क्यों कि बावर्ची खाना लेकर आ पहुंचा था; इसलिये मैंने उस ख़त और लिफ़ाफ़े को छिपाकर कमरे का दर्वाज़ा खोल दिया और जब वह चला गया तो दर्वाज़ा बदस्तूर बन्द करके उन दोनों को फिर देखना शुरू किया। पेश्तर लिफ़ाफ़ा पढ़ा गया, उस पर सिर्फ यही लिखा हुआ था,—

"ख़त हाज़ा बमुकाम शहर लखनऊ, ज़मुर्रद की सरा—बख़िदमत जनाब यूसूफ़ अली खां साहब बहादुर दामेइक़बाल हू।"

प्यारे नाज़रीन! यह तो लिफ़ाफ़े की इबारत हुई; अब ज़रा उस ख़त की बानगी भी देखिए, जो नीचे दर्ज है,—

"जनाबमन-सलामत! बाद आदाब के, गुज़ारिश यह है कि शायद उस शब को आप अभी तक भूले न होंगे, जिस रात को कि आपने मेरे मकान की ड्योढ़ी के अन्दर पनाह लेकर अपने तईं अपने दुश्मनों के वार से बचाया था। अगर मेरा इरादा कोई बुरा होता तो मैंने उसी वक़्त शोरोगुल मचाकर आपको चोरी की इल्लत में गिरफ़्तार करा दिया होता,—और मुमकिन था कि उस वक़्त ऐसी कार्रवाई ज़रूर ही काम में लाई जाती; लेकिन कुछ शुदनी अच्छी थी कि उस वक़्त आप पहिचान लिए गए थे और आपके साथ मुझे कोई दुश्मनी न थी। चुनांचे वह तकलीफ़देह कार्रवाई करनी मुनासिब न समझी गई, और न यही ठीक समझा गया कि उस वक़्त आपको टोका या अटकाया जाता। वजह इसकी यह थी कि वह बड़ा नाज़ुक वक़्त था और आप किसी भारी उलझन में मुब्तिला होरहे थे। अलाहाज़ुल्क़यास, अब मुझे आपसे मिलने की सख़्त-ज़रूरत है और इस मुलाक़ात में तर्फ़ैन का फायदा भी है; यानी इस मुलाक़ात में कुछ आपको भी खुशी हासिल होगी और कुछ मुझे भी।

लिहाज़ा, उम्मीद कामिल है कि इस ख़त के पाते ही आप फ़ौरन रवाना होंगे और जहांतक जल्द मुमकिन होगा, मुझसे मिलने में कोताही न करेंगे। अगर शायद आपने कुछ सुस्ती की और इस ख़त के पढ़ने के बाद आप फ़ौरन मुझसे न मिले, सो नतीजा इसका हम-आप-दोनों के लिये बद होगा; यानी आप भी किसी ख़ुशी से बाज़ रक्खे जायंगे और मेरी ख़ुशी का भी वही हाल होगा। यह मुमकिन है कि इस ख़त के पढ़ने के साथ ही आपके दिल में तरह-तरह के ख़यालात पैदा होंगे, लेकिन आप उनपर ज़ियादा ग़ौर करने की तकलीफ़ न उठाइयेगा; क्योंकि यहां आने पर आपके दिल की सारी उलझनें दूर होजायगी। अख़ीर में एक बात और भी आपको समझा देनी बहुत ज़रूरी है; वह यह कि जिस वक़्त यह ख़त आपको मिलेगा, उस वक़्त इसका लिफ़ाफ़ा और लिफ़ाफ़े के अन्दर का काग़ज़—यानी ये दोनों ही बिल्कुल साफ़ और कोरे मिलेंगे,—लेकिन अगर उस वक़्त कोरे काग़ज़ को देखकर और उसे किसीकी दिल्लगी समझकर चाक करके आप दूर न फेंक देंगे, तो रात के वक़्त इस लिफ़ाफ़े और इसके अन्दर के काग़ज़ पर आप ख़ुशरङ्ग इबारत लिखी हुई पायंगे। जब आप इस अजीब स्याही का जौहर सुनेंगे, तो निहायत ख़ुश होंगे,—यानी वह एक ऐसी अजीबोग़रीब रोशनाई है और इसमें यह सिफ़त है कि इससे अगर काग़ज़ पर कुछ लिखा जाय तो वह दिन के वक़्त कुछ भी मालूम न देगा, और रात के वक़्त उसी सादे काग़ज़ पर ख़ुशरङ्ग इबारत नज़र आने लगेगी। बस, यह सिलसिला योंहीं हमेशा कायम रहैगा,—यानी दिन के वक़्त काग़ज़ सादा दिखलाई देगा और रात के वक़्त नीली रौशनाई से लिखा हुआ! इसका इम्तेहान आप ख़ुद-ब-ख़ुद कर सकते हैं,—वह यह कि इस ख़त को आप ब हिफ़ाज़त अपने पास रहने दें। अगर ऐसा आप करेंगे तो सुबह के वक़्त यह कागज आपको बिल्कुल

सादा नज़र आएगा और रात के वक़्त, ब दस्तूर ख़ुशरङ्गी इबारत नज़र आने लगेगी। मैं आपके मुन्तज़िर हूं; पस, इस ख़त के पढ़ने के बाद ही आप तशरीफ़ लाइएगा और आने में ज़रा भी देर न कीजिएगा। अगर आप आज शब को तशरीफ़ न लाए तो मैं यही समझूंगा कि उस ख़त को सादा समझकर आपने उसे बर्बाद कर डाला और उसकी इबारत की ख़बर आपको मुतलक़ न हुई! मगर साहब, एक बात का आप ज़रूर ख़याल रखियेगा; वह यह कि अगर आज शब को आप न आएंगे तो फिर ता क़यामत मुझसे मुलाक़ात न होगी, और कल अलस्सुबह यह मकान छोड़ दिया जायगा; फिर दूसरे रोज़ आपका यहां तशरीफ़ लाना महज़ फ़ज़ूल और बेकार होगा। ख़ैर, ख़ुदा पर भरोसा रखकर यह ख़त आपकी ख़िदमत में पेश किया जाता है; अब आपको अख़्तियार हासिल है कि इस ख़त की लिखावट के बमूजिब आप तशरीफ़ शरीफ़ लावें, या न लावें। लेकिन तशरीफ़ लाना ही बिहतर होगा और न आना आपकी दिलरुबा दिलाराम के हक़ में निहायत ज़रर पहुंचाएगा। इस ख़त के साथ एक छोटीसी ताली भी है, इसमें यह सिफ़त है कि इससे दुनिया के सभी छोटे-बड़े ताले ब आसानी खुल और बन्द होसकते हैं। इसे आप हिफ़ाज़त के साथ अपने पास रखिए। अगर काश, रात के वक़्त सरा का फाटक बन्द होगया हो तो दर्या के तरफ़ वाले फाटक की खिड़की में लटकते हुए ताले को इस ताली से खोल और धीरे से खिड़की के रास्ते से बाहर होकर इस तरफ़ चले आइएगा। मेरे मकान का दर्वाज़ा उसी रोज़ की तरह खुला रहेगा; पस आप बेखटके अन्दर चले आइएगा। यहां आने पर आपको निहायत ख़ुशी हासिल होगी। तमाम शुद।"

नाज़रीन! यह मैं क्या देखरहा हूं? यह क्या बात है? यह कैसा तमाशा है? यह क्या बला है? और यह क्या मामला है?

मेरी तो अक्ल हैरान है, और यह कुछ भी नहीं समझ पड़ता कि इस ख़त का लिखने वाला कौन है, या इसकी लिखावट का मतलब क्या है? इतना तो ज़रूर है कि इस ख़त का लिखनेवाला मुझे और मेरी बीबी दिलाराम को बखूबी जानता-पहिचानता है; लेकिन यह बड़े ताज्जुब का मुकाम है कि उस वक़्त अंधेरे में मुझे उसने पहिचाना क्योंकर? और अगर पहिचाना, तो मेरे आगे वह ज़ाहिर क्यों न हुआ? वह किसका मकान है, यह मुझे अबतक नहीं मालूम; यह मुमकिन है कि अगर मैं उस गली में जाऊं और कोशिश करूं तो शायद उस मकान को ढूंढ निकालूं; लेकिन यह भी हो सकता है कि मैं ग़लती कर जाऊं और धोखे में आकर किसी दूसरे मकान में घुस जाऊं! अगर ऐसा हुआ,—यानी मैंने भूल की, तो इस ग़लती का नतीज़ा मेरे हक़ में बहुत ही बुरा होगा; क्योंकि रात के वक़्त सन्नाटे के आलम में किसीके मकान में घुसना, अपने तई ख़ामख्वाह चोरी की इल्लत में फसाना है!

लेकिन नाज़रीन! इसके साथ ही मेरा ख़याल उस ख़त की जानिब भी गया, जिसका हवाला मैं पेश्तर दे आया हूं, और जिसकी चन्द हिदायतें भी वहीं पर दर्ज कर आया हूं। गो, उस ख़त के लिखनेवाले को मैं पहिचान गया था और उसकी हिदायतों पर अमल करना दिलसे क़बूल कर लिया था; लेकिन, अब इस अजीब ख़त के निस्बत मैं क्या करूं? बताइए, क्या इस बारे में आपलोग कोई माकूल राय मुझे देसकेंगे!!!



सत्रहवां बयान।

क़िस्सा कोताह, मैंने आधीरात तक उस ख़त पर निहायत ग़ौर किया, लेकिन दिलने कोई माक़ूल राय न दी। यहांपर यह भी समझ लेना चाहिए कि शाम के वक़्त वही बावर्ची ब दस्तूर खाना देगया था, लेकिन उसे मैंने अबतक छूआ भी न था। ग़रज़, जब रात आधी के ऊपर पहुंची तो मैंने पेश्तर खूब पेट भर के खाना खाया। इसके बाद मामूली कपड़े पहिन, कमर से दोनों ख़ञ्जर लगा, भरी हुई दोनो पिस्तौलों को अगल-बगल के दोनों जेबों में रख और कमरे की रोशनी बुझा मैं धीरे-धीरे अपने कमरे से बाहर निकला, और बहुत एहतियात के साथ कमरे का दर्वाज़ा बन्द करके और उसकी ताली अपने ख़लीते के अन्दर रखकर मैंने बहुत ही धीरे धीरे ज़ीना उतरना शुरू किया। यहांपर यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि उस वक़्त मैंने अपने जूते को एक रूमाल में लपेटकर उसे अपनी बग़ल में दबा लिया था। इसका मतलब यह था कि मुझे बहुत ही धीरे धीरे ज़ीना उतर कर चुपचाप सरा से बाहर होना था। अगर मैं जूते पहिर लेता तो उसकी आहट होती और सरावालों की निगाह मुझपर पड़ जाती; क्योंकि मैं बहुत ही पोशीदा तौर से सरा से बाहर हुआ चाहता था। और अपना जाना किसी पर ज़ाहिर नहीं किया चाहता था ग़रज़, मैं बहुत ही आहिस्ते आहिस्ते सीढ़ियां उतरने लगा। उस वक़्त सीढ़ी पर कहीं रोशनी का नामोनिशान भी न था। और अंधेरा इस कदर था कि हाथ से हाथ नहीं सूझता था; गोया स्याही का दर्या जोश मार रहा हो! इतना और भी समझ रखिए कि उस वक़्त वह ताली मेरी मुट्ठी में थी, जिसे मैंने उस ख़त के अन्दर से पाया था। उसवक़्त एक बज चुका था।

शायद नाज़रीन, यह बात भूले न होंगे कि इस ज़ीने का जहां

पर मोड़ घूमता है, वहां पर की एक कोठरी में बावर्ची लौंडे की सी सूरत-शक्ल के किसी शख़्स को मैंने पेश्तर देखा था; लेकिन जब मैंने नीचे उसी बावर्ची लड़के को देखा था, उस वक़्त मेरा वह ख़याल बदल गया था, और तब मैंने यह समझा था कि उस कोठरी में कोई दीगर शख़्स रहता होगा। ग़रज़, जब मैं उस कोठरी के क़रीब पहुंचा तो मेरे कानों में, उस कोठरी के अन्दर दो शख्सों के बातचीत करने की आहट पहुंची। यह जानते ही मैंने उस दर्वाज़े के पास खड़े होकर अपने कान लगाए, लेकिन सब बेफ़ायदे हुआ; क्योंकि इतना तो मैंने ज़रूर जान लिया कि बातें करने वाले दो शख़्स हैं, मगर वे औरत हैं या मर्द, यह मैं ज़रा न जान सका, और साथ ही, उनकी बातें भी न समझ सका। मैं देरतक कान लगाए खड़ा रहा, लेकिन जब कोई बात समझ में न आई तो फिर मैंने वहांपर ठहर कर फ़जूल वक़्त ज़ाया करना ठीक न समझा और धीरे धीरे ज़ीना उतरना शुरू किया। ठीक उसी वक़्त घड़ियावल ने दो बजाए थे।

मैं दोही बार सीढ़ियां उतरा था कि उसी कोठरी के दर्वाज़े के खुलने की मैंने आहट पाई, जिस (कोठरी) का ज़िक्र मैं अभी कर आया हूं। यह जानकर मैं चुपचाप सन्नाटा मारे सीढ़ी पर एक तरफ़ हट कर दीवार से चिपक गया, क्योंकि किसीके सीढ़ी उतरने की आहट मैंने पाई थी।

यह मैं कह आया हूं कि अंधेरा हद से ज़ियादा था, इसलिये उतरने वाले शख़्स को न तो मैंने ही देखा, और न उसने मुझे ही; हां, यह मैंने ज़रूर जान लिया कि कोई शख़्स सीढ़ियां उतरता हुआ मेरी बग़ल से निकल गया। यह तो ख़ुदा ही ने ख़ैर की कि उतरनेवाले से मेरा बदन छू न गया, वर न उसी वक्त मेरा सीढ़ी पर छिपकर खड़े रहना ज़ाहिर होजाता, और इसके बाद फि क्या क्या होता, इसे तो ख़ुदा ही जानै

ख़ैर, ज्योंही वह शख़्स मेरी बग़ल से होता हुआ नीचे चला गया था, त्योंही एक और दीगर शख़्स तेज़ी के साथ ऊपर से उतरता हुआ जान पड़ा; लेकिन वह दोही चार सीढ़ियां उतर कर ठहर गया और उसने बहुत ही आहिस्ते आहिस्ते—"लालन-लालन—" की आवाज़ दी। यह सुनते ही मुझे शरारत सूझी; बस, मैंने दो-तीन सीढ़ियां चढ़कर बहुत ही धीरे से कहा,—"हूं!"

इतना सुनते ही उस शख़्स ने कहा,—"अगर तुझे यूसुफ़ न मिले और आसमानी भी न दिखलाई दे तो तू फ़ौरन इस सरा में लौट आ और मुझे जल्द इस अमर की ख़बर दे। फिर जो कुछ होगा, देखा जायगा। मैंने पहिले से भी कुछ बन्दोबस्त कर रक्खा है और तुझे भी बहुत कुछ समझा दिया है; अब इसके आगे जो कुछ करना होगा, वह तेरे लौट आने पर ठीक किया जायगा। बस, अब तू फ़ौरन जा। सिर्फ़ एक यही ज़रूरी बात थी, जिसके लिये तुझे बुलाया गया। जा और जल्द आकर जो कुछ हाल हो, उसकी मुझे इत्तिला दे; मैं तेरे मुन्तज़िर हूं।"

इतना सुन और—"बहुत ख़ूब—"कहकर मैं तो धीरे धीरे सीढ़ियां उतरने लगा और वह शख़्स, जिसने कि मुझे अपना आदमी जानकर ऊपर लिखा हुआ हुक्म दिया था, सीढ़ियां चढ़कर अपनी कोठरी में चला गया; क्योंकि कोठरी के दर्वाज़े के बन्द होने की हलकी सी आहट मैंने पाई थी।

प्यारे, नाज़रीन! क्या आप कुछ समझे कि इस गोरखधन्धे का क्या मतलब है? ख़ैर, इतना तो आपने ज़रूर ही समझ लिया होगा कि ऊपर की बातें मुझसे ही ताल्लुक रखती हैं, और मेरा कोई मिहर्बान दोस्त मुझे किसी आफ़त से बचाने की तदबीर कर रहा है; लेकिन, वह मेरा मददगार कौन है और इसने अपने तईं इस तरह मुझसे छिपा क्यों रक्खा है! क्या वह मुझसे मिलकर मुझे ख़बर्दार नहीं कर सकता था जो इसने यों छिपे छिपे मेरी

खिदमतगारी करने की ठानी है! दर-असल, यह है कौन शख़्स, और मेरे सामने आने में इसे क्यों उज़्र है!

ग़रज़, इन्हीं बातों पर कुछ देर तक मैंने ग़ौर किया, और इसके बाद मुझे एक दिल्लगी सूझी! यानी फिर मैंने सरा से बाहर जाने का तो इरादा छोड़ दिया और अपने उस मिहर्बान और मददगार शख़्स को देखना चाहा, जो मुझसे अपने तईं यों छिपा-लुका-कर मेरी ख़िदमतगारी किया चाहता था।

ख़ैर, फिर मैं नीचे न गया और धीरे धीरे ऊपर चढ़ने लगा। अँधेरा ख़ूब ही था, फिर भी मैंने उस कोठरी के दर्वाज़े को आसानी से पा लिया और धीरे धीरे उसे थपथपाया; लेकिन उसका कोई नतीजा न निकला, यानी वह दर्वाज़ा न खुला! यहांतक कि मैं कुछ देर तक उस दर्वाज़े को भड़भड़ाता रहा, लेकिन भीतर से किसीने दर्वाज़ा न खोला। यह तमाशा देखकर पहिले तो मैंने यह सोचा कि मुझसे कुछ भूल हुई, यानी यह शायद वह कोठरी न हो; लेकिन नहीं,—तुरत ही मैंने यह बात बख़ूबी समझ ली कि इस ज़ीने के सिलसिले में ऊपर से नीचे तक के बीच में सिर्फ़ एक यही तो कोठरी है; क्योंकि इस कोठरी के अलावे सीढ़ी पर दूसरी और कोई भी कोठरी नहीं है! ग़रज़ यह कि मैंने आधे घन्टे तक उस कोठरी का दर्वाज़ा थपथपाया, लेकिन इसका नतीजा कुछ भी न निकला,—यानी वह दर्वाज़ा नहीं ही खुला!!!

यह अजीब तमाशा देखकर मैं बहुत ही शर्मिन्दा हुआ; क्योंकि इस कार्रवाई से मैं अपने जिस मददगार का दीदार देखा चाहता था, उसने मेरी चालाकी पर पाला डाल दिया और दर्वाज़ा न खोला! मैं हैरान था कि ऐसा क्यों हुआ और दर्वाज़ा क्यों न खोला गया! अभी तो मैंने यह बात अपने कानों से सुनी थी कि,—इस कोठरीवाले शख़्स ने अपने आदमी से, जिसे उसने "लालन" कहकर पुकारा था, यों कहा था कि,—'अगर तुझे यूसुफ़ न मिले

और आसमानी भी न दिखलाई दे तो तू फ़ौरन इस सरा में लौट आ और मुझे जल्द इस अमर की ख़बर दे---' मगर फिर क्या सबब है कि अब वह कोठरी के अन्दर-वाला शख़्स थपथपाने पर भी दर्वाज़ा नहीं खोलता!!!

नाज़रीन! मैं कुछ देर तक इसी बात पर ग़ौर करता रहा; अख़ीर में मेरी समझ में यह बात आई कि, शायद इस दर्वाज़े के खटखटाने का कोई ख़ास क़ायदा मुक़र्रर हो! लेकिन मैंने उस क़ायदे के मोफ़िक न खटखटाया हो, इसीसे दर्वाज़ा न खुलता हो!!! ख़ैर, कुछ भी हुआ हो, लेकिन मेरी उम्मीदों का ख़ातमा होगया और उस कोठरी का दर्वाज़ा न खुला! ठीक इसी वक़्त घड़ी ने तीन बजाए, जिसे सुनकर मैं ताज्जुब करने लगा कि क्या मुझे इस ज़ीने पर खड़े खड़े ही इतना वक़्त गुज़र गया!!!

आख़िर, इतने ही में किसीके आने की आहट मालूम हुई, यानी मुझे ऐसा जान पड़ा कि कोई शख़्स सीढ़ियां चढ़ता हुआ ऊपर आरहा है! यह देखकर मैं उस कोठरी के दर्वाज़े से हटकर और दो-तीन डण्डे सीढ़ियां चढ़कर ठहर गया और उस आनेवाले का इन्तज़ार करने लगा।

सो, मैं अंधेरे के सबब आनेवाले की सूरत तो न देख सका; पर इतना ज़रूर मालूम होगया कि उसके आते ही उस कोठरी का दर्वाज़ा तुरत खुला और फ़ौरन बन्द होगया!!!

इस अजीब कैफ़ियत को देखकर मेरे ताज्जुब का कोई इन्तेहा न रहा और मैंने कोठरीवाले शख़्स के मुक़ाबिल में पूरी शिकस्त खाई!!!

ख़ैर, मैं तुरत कई सीढ़ियां उतरकर उस कोठरी के दर्वाज़े से जा चिपका और कान लगाकर इस बात का इन्तज़ार करने लगा कि,—'देखूं, अब किसी किस्म की आहट उस कोठरी के अन्दर से मालूम पड़ती है, या नहीं, लेकिन फिर किसी तरह की भी

कोई आहट न मालूम हुई ! पहिले तो मैंने उस कोठरी के अन्दर से दो शख़्सों की बातचीत करने की फुसफुसाहट सुनी थी, लेकिन इस मर्तबा वह (फुसफुसाहट) भी न सुनाई दी; यहांतक कि देर तक खड़े रहने पर भी मैंने किसी तरह की कोई भी आहट न पाई !

योंहीं बहुत देरतक मैं उस कोठरी के दर्वाज़े से लगा हुआ खड़ा रहा, लेकिन जब सरा में लोगों के जागने की आहट मैंने पाई तो फिर मैं उस जगह पर न ठहर सका और तुरत सीढ़ियां चढ़कर और ताला खोलकर अपने कमरे में पहुंचा। कमरे में दाख़िल होने के बाद मैंने उसका दर्वाज़ा भीतर से बन्द कर लिया और शमादान जलाकर घड़ी की जानिब नज़र उठाई तो मालूम हुआ कि चार बजने में थोड़ी ही देर है ! यह देखकर मैं पलंग पर जा लेटा, क्योंकि रातभर मुझे जिस हैरानी ने परीशान किया था, वह तो नाज़रीन जानते ही हैं !

मैं देरतक पड़ा-पड़ा तरह-तरह के ख़यालों में उलझा रहा, अख़ीर में मैंने यही समझा कि, ' उस कोठरी का दर्वाज़ा किसी ख़ास हिक्मत से खुलता होगा, जिसे कि वह शख़्स (जो कि अभी सीढ़ी चढ़कर आया।और उस कोठरी का दर्वाज़ा खोलकर भीतर घुस गया) ज़रूर जानता होगा, तब तो उस कोठरी का दर्वाज़ा तुरत खुल गया और वह उसके अन्दर चला गया !' मेरे ख़याल से यही वजह ठीक भी मालूम होती है, क्योंकि जब कि मेरे थपथपाने से वह दर्वाज़ा न खुला तो, इससे यह बात साफ़ ज़ाहिर होती है कि उस शख़्स को भी उस दर्वाज़े के खोलने की हिक्मत मालूम थी। अल्लाह ! यह सरा तो अजब तिलिस्मी सरा मालूम होती है ! ! !

चुनांचे, फिर तो नींद के झोंके बराबर आने लग गए थे, इसलिये कुछ देरतक आराम कर लेना मैंने मुनासिब समझा। गरज़ मैं दो चार [illegible] बदलकर फौरन गहरी नींद में गाफ़िल होगया

अठारहवां बयान ।

मेरी नींद जब खुली, उस वक़्त घड़ी पर निगाह दौड़ाने से मालूम हुआ कि, 'दस बज चुके हैं !' यह देखकर मैं फ़ौरन उठ बैठा और ज्योंही मैंने बीचवाले कमरे में नज़र डाली, तो क्या देखा कि मेरा नया दोस्त मन्सूर मसनद पर लेटा हुआ वही किताब देख रहा है, जिसका ज़िक्र मैं कई मर्तबा कर आया हूं ! यह देखते ही मैं तेज़ी के साथ उसकी तरफ़ बढ़ा और उसके पास बैठ और हँसकर कहने लगा,—"वल्लाह, दोस्त ! तुम तो दूज के चाँद होगए ! मैं तुम्हारी फ़िक्र में इतना हैरान व परेशान रहा कि जो क़ाबिल इज़हार नहीं !"

मेरी बातें सुन और मेरी तरफ़ मुस्कुराहट के साथ देखकर उसने मेरे हाथ को अपने हाथ में लेलिया और कहा,—"वाक़ई, दोस्त ! बेशक तुम्हें मेरे वास्ते बड़ी फ़िक्र हुई होगी, लेकिन क्या करूं; मैं इतना लाचार था कि एक लहज़े के लिये भी तुम्हारे पास न आ सका ! भई, तुम मुझे माफ़ करो, क्योंकि यह एक मज़बूरी थी कि जिसने मुझे तुमसे मिलने न दिया । बात यह है कि मैं तुम से शायद पेश्तर यह कह चुका हूं कि मेरा मालिक मुझपर अपने घर का कुल इन्तज़ाम छोड़कर बादशाही काम के वास्ते बाहर गया हुआ है- - -"

इतना सुनतेही मैंने कहा,—"हां, हां, यह बात मुझे भूली नहीं है; उस दिन तुमने ऐसा ही कहा था ।"

मन्सूर ने कहा,—"पस, यही वजह थी कि मैं यहां न आसका' कल मेरा मालिक आगया, इसलिये आज उससे दिनभर की रुख़सत लेकर मैं तुम्हारे पास आ मौजूद हुआ हूं । मैं यहां आठ बजे के क़रीब आया हूं, लेकिन तुम नींद में इतने बेख़बर थे कि तुम्हें मेरे आने की ज़रा आहट न हुई ! चुनांचे मैंने तुमको

मुनासिब न समझा और इस किताब को देखना शुरू किया। लेकिन तुम यह तो बताओ कि तुम्हारी तबीयत कैसी है और इतनी देर तक सोते रहने का क्या सबब है ?"

नाज़रीन, आपलोग तो मेरे डेढ़ पहर दिन तक सोते रहने का सबब बखूबी जानते हैं, लेकिन मैंने इसका असली भेद, या उस ख़त का हाल, जो मुझे कल मिला था, मन्सुर से मुतलक़ न बतलाया और झूठमूठ बहाना बताकर यों कहा,—"मेरे दोस्त, इस बात को तुम खुद अपने दिल से पूछ सकते हो कि तनहाई के आलम में इन्सान की क्या हालत होजाती है ? तुम्हारा दीदार नसीब होता नहीं, और मैं महज़ बेकार बैठा हुआ हूं; ऐसी हालत में अब तुम्हीं बतलाओ कि रात को नींद क्योंकर आए ! दिन तो किसी-किसी तरह गुज़र भी जाता है, लेकिन रात काटनी दुश्वार होजाती है ! मैं पलङ्ग पर करवटें बदलता हुआ न मालूम क्या-क्या ख़याली पुलाव पकाया करता हूं, और तरह-तरह के नाक़िस ख़्वाब देखा करता हूं; योंही रात का बहुत बड़ा हिस्सा गुज़र जाता है और सुबह के वक़्त नींद का ग़लबा शुरू होता है। आज कई दिनों से बराबर यही सिलसिला ज़ारी है। मैं हरचन्द यह चाहता हूं कि रात के वक़्त किताब देखते-देखते सो जाया करूं, लेकिन मज़ा तो यह है कि किताब पढ़ने को दिल ही नहीं चाहता, और यों किसी तरह पहाड़ सी रात काटे कटती नहीं। अफ़सोस, आज कई दिनों के बाद तुम आए भी, तो सिर्फ़ दिनभर के लिये ! यह कैसे अफ़सोस, ताज्जुब और रञ्ज का मुकाम है कि जिस रोज़ से इस सरा में डेरा आया है, तुम एक रात भी यहां न रहे ! अगर यही हालत तुम्हारी कुछ दिनों तक और रही, तो अजब नहीं कि मुझे तुम्हारा साथ छोड़ देना पड़ेगा और मैं कहीं चल दूंगा।"

मेरी बातें सुनकर मन्सूर ने मेरे हाथ पर हाथ मारकर ज़ोर से कहकहा लगाया और कहा "अल्लाहआलम ! यह नाज़, यह नख़रे,

यह तुर्शी, यह गुस्सा, यह सितम, यह क़यामत, यह बेरुख़ी और यह बेमुरव्वती !!! अय प्यारी, तुम अपनी इस झुंझलाहट, खिझलाहट और मचलाहट को दूर करो और इत्मीनान रक्खो कि मैं अब न तो ग़ैरहाज़िर ही रहूंगा, और न तुमको यों खुदसर कहीं चले जाने ही दूंगा। चाहे जिस तरह हो, दिन-रात में एक मर्तबा मैं तुमसे ज़रूर मिल लिया करूंगा और तुम्हें रंजीदा न होने दूंगा। क्या करूं, मैं नौकरी से लाचार हूं। अगर तुम्हें यह नौकरी नागवार मालूम हो तो मैं इसे तुम्हारी ख़ातिर फ़ौरन छोड़ सकता हूं, लेकिन फिर भी तो किसी न किसी नौकरी की तलाश करनी ही पड़ेगी; क्योंकि बेकार बैठे रहने से क्योंकर काम चल सकेगा! मैं तो तुम्हारे लिये भी एक नौकरी की तलाश कर रहा हूं, चुनांचे तुम्हें बग़ैर कहे-सुने कहीं भी जाने की ज़रूरत नहीं है। ख़ैर, जो कुछ होगा, देखा जायगा; फ़िलहाल तुम ज़रूरियात के कामों से फ़ारिग होजाओ, क्योंकि ग्यारह बजा हो चाहते हैं! बावर्ची भी खाना लेकर आता ही होगा।"

यह सुनकर मैं उठा और अपने ज़रूरियात के कामों में लगा। एक घंटे के अन्दर-अन्दर मैं गुस्ल वग़ैरह से फ़ारिग होकर जब कमरे के अन्दर आया, तो क्या देखता हूं कि खाना चुना हुआ है और वह लौंडा बावर्ची भी मौजूद है।

ख़ैर, फिर तो मन्सूर के साथ बैठकर मैंने ख़ूब इत्मीनान के साथ खाना खाया। इसके बाद बावर्ची तो दस्तरख़्वान उठाकर चला गया और मन्सूर ने हुक़्क़ा ताज़ा करके चिलम भरनी शुरू की। फिर तो हम दोनों बाहम बैठकर देरतक पान खाते और हुक़्क़ा गुड़-गुड़ाते रहे, साथ ही साथ तरह तरह की बातें भी होती रहीं। यों ही तीन बजे तक हम-दोनों बड़े आराम के साथ गपशप करते रहे, इसके बाद कपड़े बदल और हर तरह से तयार होकर कमरे का ताला बन्दकर के हवाख़ोरी के लिये निकले।

सड़क पर आकर मन्सूर ने एक किराए की गाड़ी ठीक की। उसपर हम-दोनों सवार होकर बहुत दूर-दूर की सैर करके शाम को सरा में वापस आए। मुझे सरा के फाटक तक पहुंचाकर मन्सूर रुख़सत हुआ, और मैं ऊपर कमरे में चला आया। मैंने उसे हरचन्द रोका और खाना खा लेने के बाद चले जाने के लिये कहा, लेकिन उसने बड़ी आजिज़ी के साथ रुख़सत चाही और यों कहा कि,—'मैं सिर्फ़ दिनभर की फ़ुर्सत लेकर यहां आया था; पस, अब किसी तरह भी ज़ियादा देर करना मुनासिब नहीं है।'

ख़ैर, मैंने शमादान रौशन किया और हुक्क़ा ताज़ा करके मसनद पर बैठकर किसी अम्र में ग़ौर करना शुरू किया। मैंने क़रीब दो घंटे के, ख़ूब अच्छी तरह से अपने दिल ही दिल में किसी बात पर ग़ौर किया, इसके बाद उठकर कमरे में टहलना शुरू किया। इतने ही में खाना लेकर बावर्ची भी आ पहुंचा, क्योंकि दस बजने का वक़्त होचुका था।

ग़रज़, बावर्ची तो खाना रखकर चला गया, और मैंने खाना खाने के बाद कई बीड़े पान के खाकर बार उसी किताब को देखना शुरू किया। एक घंटे तक मैं किताब देखता रहा, इसके बाद रौशनी गुल करदी और अभी कुछ घंटे पहिले जिस अम्र में मैंने ग़ौर किया था, उसी काम में मैं मशग़ूल हुआ।

नाज़रीन, आप ज़रा सब्र अख़्तियार करेंगे तो आप पर यह बात बख़ूबी रौशन होजायगी कि मैंने किस अम्र में क्या ग़ौर किया और उसके मुताबिक जिस कार्रवाई में मैं मशग़ूल हुआ! ख़ैर, सुनते तो चलिए!



उन्नीसवां बयान ।

यह कहा जा चुका है कि उस ज़ीनेवाली कोठरी के अन्दर का हाल मैं जानना चाहता था, लेकिन न जान सका; मगर उसके बाद जो कुछ कार्रवाई मैंने की और उसमें जहांतक मैं कामयाब हुआ, उसे नाज़रीन दिल लगाकर सुनें ।—

यह बात शायद नाज़रीन भी ज़रूर समझगए होंगे कि उस ज़ीनेवाली कोठरी में कोई ऐसा शख़्स ज़रूर रहता था, जो शायद मेरी बिहतरी चाहनेवाला था; लेकिन वह मुझसे अपने तईं पोशीदा रखता था ! वह कौन बशर था और किसलिये मुझसे मुंह चुराता था, यह तो वही जाने; लेकिन इतना मैं ज़रूर समझ गया था कि वह मेरा दोस्त है, दुश्मन नहीं । ख़ैर, जो कुछ हो,—मगर मैं उसे ढूंढ निकालना चाहता था और यह जानना चाहता था कि मुझसे वह यों छिपता क्यों है ?

ग़रज़, मैंने अपने दिल ही दिल में यह पक्का इरादा कर लिया कि अब उस शख़्स की तलाश ज़रूर करनी चाहिए; लेकिन किस तौर से, यह बात आपलोगों को आगे चलकर आप ही आप मालूम होजायगी ।

ख़ैर, इस ज़िक्र को तो यहीं छोड़िए और मेरी कार्रवाईयों को ग़ौर के साथ देखिए,—

यह मैं कह आया हूं कि, 'चिराग़ गुल करने के बाद मैं किसी काम में मशग़ूल हुआ था ।' वह काम यह था कि मैं बहुत ही आहिस्ते से अपने कमरे से बाहर हो और उसका दर्वाज़ा बन्द करके धीरे-धीरे ज़ीना उतरता हुआ उस कोठरी के दर्वाज़े के पास जा खड़ा हुआ और ख़ूब ग़ौर के साथ कान लगाकर आहट लेने लगा । मगर अफ़सोस ! जब कि दो घंटे से ज़ियादा गुज़र गए और किसी क़िस्म की आहट न मालूम हुई तो मैं हाथ मलता

हुआ अपने कमरे में वापस चला आया और पलंग पर लेट रहा। थोड़ी ही देर के बाद घड़ी ने दो बजा दिए। आख़िर, मैं फिर ज़ीने-वाली कोठरी के पास पहुंचा और एक घंटा वक़्त बर्बाद करके अपने कमरे में लौट आया। तीन बज चुके थे, इसलिये फिर जागना बेफ़ायदे समझा गया और मैं सोरहा।

सुबह को आफ़ताब निकलने के पेश्तर ही मेरी नींद खुल गई और मैं मामूली कामों से निबटकर सरा से बाहर हुआ। मेरा इरादा उस मकान के जानिब जाने का था, जिसके अन्दर कि मैंने उस रात को पनाह ली थी, जिस शब को कि मैं लियाक़तहुसैन के मकान से भागा था।

ग़रज़, ज्योंहीं मैं सरा के गोमती की तरफ़ वाले फाटक से निकलकर दस बीस क़दम आगे बढ़ा होऊंगा कि मुझे पीछे से किसीने पुकारा। यह सुनते ही मैंने मुड़कर देखा कि वही बावर्ची लौंडा मुस्कुराता हुआ मेरी तरफ़ चला आरहा है!

उसे इतने तड़के अपने सामने देखकर मैंने कहा,—"क्यों म्यां, अभी तुमने मुझे पुकारा?"

यह सुन और ओठों के अन्दर ही अन्दर मुस्कुराकर उसने कहा,—"जी नहीं, मैंने तो आपको नहीं पुकारा!"

यह सुन और ताज्जुब में आकर मैंने हर चहार तरफ़ नज़र दौड़ाई, लेकिन मुझे ऐसा कोई न दिखलाई दिया, जिसने मुझे आवाज़ दी हो! हां, अगर कोई शख़्स ऐसा था कि जिसने मुझे पुकारा हो, तो वह सिवा इस बावर्ची लड़के के और कोई न था; लेकिन जब कि वह साफ़ इन्कार ही कर गया तो फिर इस पर और मैं कर ही क्या सकता था! ख़ैर, फिर मैंने उससे कुछ न कहकर एक तरफ़ का रास्ता लिया, लेकिन वह लड़का भी मेरे साथ ही साथ चला!

यह देख मैंने उससे पूछा —"तुम किधर जारहे हो?"

उसने कहा,—"जी, किसी तरफ़ भी नहीं। सुबह के वक़्त मुझे कोई काम नहीं रहता, इसलिये ज़रा इधर-उधर घूम आया करता हूं। आप भी तो शायद घूमने ही निकले होंगे?"

उसकी बातें सुनकर मैंने कहा,—"हां, मैं भी सिर्फ़ हवाख़ोरी के ही लिये निकला हूं।"

यह सुनकर उसने कहा,—"तो बिहतर है, चलिए, मैं भी आपके हमराह चलूंगा, और साथ ही साथ वापस भी चला आऊंगा।"

नाज़रीन, अब आप सोच सकते हैं, कि भला उसे मैं क्योंकर अपने साथ चलने से रोक सकता था! आख़िर, मैं उसके साथ बातें करता हुआ उधर ही चला, जिधर वह मकान था। पेश्तर तो मैंने यह सोचा कि इस लौंडे के साथ उस तरफ़ न जाऊं, लेकिन फिर तुरत मेरा ख़याल बदल गया और मैंने दिलही दिल में यों सोच लिया कि अगर यह मेरे साथ ही रहे तो इसमें मेरा हर्ज़ ही क्या है! ख़ैर, मैं उससे बातें करता हुआ उसी तरफ़ चला।

मैंने कहा,—"तुम्हारा नाम क्या है?"

उसने कहा,—"जी, मुझे लोग अब्बूर कहते हैं।"

मैं,—"तुम इस सरा के बावर्ची खाने में कितने दिनों से नौकर हो?"

वह,—"थोड़े ही अर्से से।"

मैं,—"तुम्हारा मुशाहरा क्या है?"

वह,—"खाने और कपड़े के अलावे मुझे दो रुपए माहवार मिलते हैं; लेकिन रातदिन हाज़िर रहना पड़ता है, और बग़ैर मालिक से इजाज़त लिये, कहीं आना-जाना नहीं होसकता!"

मैं,—"मुशाहरा तुम्हारा बहुत ही थोड़ा है।"

वह,—"क्या करूं हुज़ूर, मजबूरी है!"

मैं "और तुम्हारे कौन कौन हैं?"

वह,—"जी, सिर्फ़ वाल्दा हैं।"

मैं,—"अगर तुम्हें कोई अच्छी नौकरी मिले तो तुम उसे मंजूर करोगे?"

वह,—"जी हां, बेशक क़बूल करूंगा, लेकिन छः महीने के बाद; क्योंकि मुझसे छः महीने का इकरारनामा लिखा लिया गया है; पस, अगर छः महीने के अन्दर मैं इस नौकरी को छोड़ूं तो क़ैदखाने भेजा जाऊं!"

मैं,—"मेरे दोस्त मन्सूर से तुम्हारी कबकी जान पहिचान है?"

वह,—"जी, जबसे आप और वे इस सरा में आए, तभी से उनके साथ मेरी जानपहिचान हुई और उन्होंने मेरे मालिक से खाना वग़ैरह पहुंचाने की बातचीत ठीकठाक करके उसे कुछ रुपए भी दिए। बस, इसके पहिले उन्हें या आपको मैंने कभी नहीं देखा था। हां, यह ज़रूर है कि वे बड़े अच्छे आदमी हैं और मुझे भी कभी कभी इनाम के तौर पर कुछ देते रहते हैं। यही वजह है कि मैं बड़ी मुस्तैदी और दियानतदारी के साथ उम्दा से उम्दा खाना ठीक वक़्त पर आपको पहुंचाया करता हूं।"

ग़रज़, फिर मैंने उससे और कोई सवाल न किया, क्योंकि उस मकान के क़रीब मैं पहुंच गया था। मैंने ख़ूब ग़ौर के साथ उस मकान को देखा, जिसमें कि उस रात को मैंने पनाह ली थी। वह निहायत नफ़ीस, मगर छोटासा मकान था, और उसका वह दर्वाज़ा, जिसके अन्दर कि उस शब को मैं घुस गया था, इस वक़्त बन्द था। मैंने ख़ूब ग़ौर के साथ नीचे से ऊपर तक उस मकान को देखा, लेकिन उसमें का कोई भी दर्वाज़ा ऐसा न था कि जो खुला हुआ हो! मैंने अगल-बग़ल के मकानों को भी देखा, जो खुले हुए थे और आबाद मालूम होते थे; लेकिन वह मकान बिलकुल सूनसान दिखलाई पड़ता था! यह देखकर मैंने चाहा कि अगल बगल के मकानों में रहनेवालों से उस मकान की बाबत

कुछ दर्याफ़्त करूं, लेकिन उस बावर्ची लौंडे के सबब मैं खामोश रहा, और धीरे-धीरे उस गली से बाहर होकर सड़क का रास्ता लिया। यों ही उस मसजिद की तरफ़ से होता हुआ, जो कि मेरे मकान को खोदकर बनाई जा रही थी, मैं सरा में वापस आया।

रास्ते में फिर उस बावर्ची लड़के के साथ और कोई बात नहीं हुई थी; हां, यह ज़रूर था कि वह बराबर मेरे साथ ही रहा। साढ़े आठ बजने का वक़्त था, जब मैं सरा में वापस आया था। मैं तो ऊपर अपने कमरे में चला आया था और बावर्ची लड़का अपने कारख़ाने में चला गया था। गरज़, मैं जब मामूली कामों से फ़ारिग होकर बैठा हुआ किताब देख रहा था, तब मेरा दोस्त मन्सूर आपहुंचा और उसने आते ही हंसकर कहा,—"वल्लाह दोस्त, आज तो तुम खूब तड़के हवाख़ोरी के लिये गए थे!"

यह सुनकर और हंसकर मैं बोला,—"यह ख़बर तुम्हें इतनी जल्दी क्योंकर मालूम हुई?"

उसने कहा,—"मैंने तुमको दूर से एक तरफ़ को जाते देखा था। उस वक़्त मैं भी अपने मालिक के साथ हवाख़ोरी के लिये एक तरफ़ को, घोड़े पर सवार, जा रहा था।"

मैंने कहा,—"ऐसा! तब तो तुम्हारा मालिक तुम पर खूब मिहरबान मालूम देता है!"

वह बोला,—"उसकी मिरहबानियों का बयान मैं कहांतक करूं! देखो, अभी मैं कल का नौकर हूं, मगर इतने ही पर वह मुझ पर अपने सारे घर के इन्तज़ामों का बोझ डालकर बाहर चला गया था।"

ग़रज़, फिर उसके साथ मेरी मामूली बातें होती रहीं। इसके बाद खाना-वाना खाकर वह तो चला गया, और रात को मज़े में न सोने के सबब मैं कमरे का दर्वाज़ा बदस्तूर बन्द करके सो रहा।

बीसवां बयान ।

जब मेरी नींद खुली तो मैंने देखा कि घड़ी में चार बज गए हैं। यह देखकर मैं उठ बैठा और हाथ मुंह धो और पान खाकर कमरे में चहलक़दमी करने लगा। कुछ देर तक मैं बरामदे में टहलता हुआ गोमती की भी बहार लेता रहा। एकाएक मेरा ख़याल उस ख़त की तरफ़ गया, जो मुझे नीली रौशनाईसे लिखा हुआ मिला था, जिसमें यह लिखा हुआ था कि,—'दिन के वक़्त यह ख़त और लिफ़ाफ़ा बिलकुल सादा नज़र आएगा, लेकिन रात के वक़्त ख़ुशरङ्ग नीली रौशनाई से लिखा हुआ दिखलाई देगा।' पस, इस ख़याल के होते ही मैंने उस ख़त को निकालकर देखा, तो क्या देखा कि वाक़ई वह ख़त और लिफ़ाफ़ा बिलकुल कोरा है!!!

यह अजीब तमाशा देखकर मैं हैरत में आगया और उस ख़त और लिफ़ाफ़े को अपनी जेब के अन्दर रखकर हवाख़ोरी के लिए जाने का इरादा करने लगा। मैं कपड़े बदलने के लिये आलमारी के क़रीब पहुंचा ही था कि मेरे कमरे के दर्वाज़े को किसीने बाहर से थपथपाया, जिसकी आहट पाते ही मैंने दर्वाज़ा खोल दिया। दर्वाज़ा खुलने के साथ ही किसी शख़्स ने मेरे रू-ब-रू एक ख़त फेंक कर अपनी राह ली। जब तक मैं उसे पुकारू, तबतक तो वह सरा के नीचे वाले सहन में पहुंच गया था, क्योंकि मैंने बरामदे में से झांक कर नीचे देखा तो उस चिट्ठीरसा को सड़क की तरफ़ वाले फाटक की तरफ़ तेज़ी के साथ लपके हुए जाते देखा था।

ख़ैर, मैंने कमरे के अन्दर आकर दर्वाज़ा बन्द कर लिया और उस लिफ़ाफ़े को देखा, जिसपर मेरा नाम लिखा हुआ था। फिर लिफ़ाफ़ा फाड़ और उसके अन्दर से ख़त को निकालकर पढ़ना

शुरू किया। उस ख़त में जो कुछ लिखा हुआ था, उसकी हूबहू नक़ल नाज़रीन नीचे देखें,—

"दोस्त यूसुफ़! इसके क़ब्ल एक ख़त तुम्हारे पास भेजा जा चुका है, जिसके अंदर एक ताली भी तुमने पाई होगी। मुझे मालूम होता है कि उस ख़त और लिफ़ाफ़े को बिल्कुल सादा देखकर तुमने किसीकी दिल्लगी समझी होगी, और उन दोनों को फाड़कर फेंक दिया होगा! अगर वाक़ई यही बात है, तब तो ख़ैर,—जो हुआ सो हुआ,—अब तुम बहुत जल्द उस मकान में आओ, जिसमें कि तुमने लियाक़तहुसैन के मकान से भागकर उस रात को पनाह ली थी। तुम्हें यह जानकर निहायत खुशी होगी कि तुम्हारी दिलरुबा दिलाराम इस मकान में आगई है और तुम्हारा इन्तज़ार कर रही है। मगर इतना तुम याद रक्खो कि यहां दिन के वक़्त आने का इरादा न करना। हां, रात के वक़्त जब तुम्हारा दिल चाहे, बेखटके आ सकते हो; लेकिन आज ही शब को आना चाहिए, वरन फिर ता क़यामत दिलाराम का दीदार तुम्हें नसीब न होगा। ज़ियादा हाल इस ख़त में लिखना सरासर नामुनासिब है; फ़क़त्।"

नाज़रीन, आज जो शख़्स इस ख़त को दे गया था, वह उस चिट्ठीरसा से बिल्कुल मिलता-जुलता हुआ था, जिसने कि उस तालीवाले ख़त को मुझतलक पहुंचाया था। मगर ख़ैर, पढ़ लेने के बाद लिफ़ाफ़े में रखकर इस ख़त को भी मैंने अपनी जेब में रख लिया और यही बात दिल ही दिल में ठीक करली कि इस ख़त या इसके पेश्तरवाले ख़त पर कुछ भी अमल न करना चाहिए; क्योंकि इन ख़तों की लिखावटें बिल्कुल दग़ा व फ़रेब से भरी हुई मालूम होती हैं और शायद ये कुल कार्रवाइयां शैतान आसमानी की जानिब से की जा रही हैं! चुनांचे इन बखेड़ों में न फंसना चाहिए और जहांतक मुमकिन हो, अपने तईं इन बलाओं से बचाए रखना चाहिए।

ग़रज़, इन्हीं सब बातों पर ग़ौर करते करते शाम हो गई, तब मैंने शमादान रौशन किया, और उसके सामने मैं वही किताब खोल बैठा। एक घंटे के बाद जब खूब अँधेरा छा गया, तब मैंने उस ख़त को ज़ेब से निकालकर देखा, जिसमें यह लिखा हुआ था कि,—'यह ख़त और इसका लिफ़ाफ़ा, यानी ये दोनों, दिन के वक़्त तो बिलकुल सादे नज़र आवेंगे, लेकिन रात के वक़्त खुशरङ्ग नीली रौशनाई से लिखे हुए दिखलाई देंगे।' लेकिन, अल्लाह! यह क्या बात देखने में आई! यानी वे दोनों (लिफ़ाफ़ा और काग़ज़) जो कि दिन के वक़्त बिलकुल सादे नज़र आते थे, इस वक़्त भी बिल्कुल सादे दिखलाई दिए!!! इस अजीब तमाशे को देखकर मैं बड़ा हैरान हुआ और सोचने लगा कि यह क्या बात है? क्या यह लिफ़ाफ़ा और काग़ज़ मेरी ज़ेब में से बदल गया, या ग़ायब होगया! यह बात क्या है, जो लिखा हुआ काग़ज़ सादा होगया!!! ख़ैर, मैं देर तक इस बात पर ग़ौर करता रहा, इसके बाद मैंने उस (दूसरे ख़त) को फिर से पढ़ा, लेकिन अब मेरा इरादा बदल गया था, इसलिये उस ख़त पर मैंने मुतलक़ यक़ीन न किया और वहां जाने के इरादे से भी बाज़ आया। मैंने उन दोनो ख़तों व लिफ़ाफ़ों को भी फाड़कर फेंक दिया।

अलाहाज़ुलक़यास, फिर तो मैं देर तक उसी दिलचस्प किताब को देखता रहा, और जब बावर्ची खाना देकर चला गया, तब मैंने खाने से फ़ारिग़ होकर पान खा और चिराग़ गुल करके उस कमरे का दर्वाज़ा खोला, जिसे कि मेरे दोस्त मन्सूर ने अपने लिये ठीक किया था। उस कमरे में भी पलङ्ग बिछा हुआ था, इसलिये मैं उसी पर लेट गया और इस बात का क़तई इरादा कर लिया कि आज इसी कमरे में जागकर सारी रात काट देनी चाहिए।

ख़ैर जिस वक़्त मैं मन्सूर के कमरे में जाकर पलङ्ग पर लेटा

था, उस वक़्त घड़ी ने ठीक ग्यारह बजाए थे; लेकिन मुझे कब झपकी आ गई, यह तो मैं नहीं जान सका, मगर जब मेरी नींद खुली तो मैं घबराकर उठ बैठा, और रौशनी जलाकर घड़ी की तरफ़ देखा तो मालूम हुआ कि दो बजने ही चाहते हैं!

यह देखकर और शमादान जलता हुआ ही छोड़कर मैं अपने कमरे से आहिस्ते आहिस्ते बाहर हुआ, और ज़ीने पर वाली उस कोठरी के दर्वाज़े पर जा पहुंचा, जिस, (कोठरी) के बारे में पेश्तर लिखा जा चुका है।

मैं कामिल दो घंटे तक उस कोठरी के दरवाज़े पर खड़ा रहा, लेकिन जब किसी क़िस्म की आहट मैंने न पाई और चार भी बज गए, तब मैं अपने कमरे में वापस चला आया।

ग़रज़, कहांतक कहूं,—योंहीं जब रगड़ करते-करते मुझे पंद्रह रोज़ गुज़र गए और किसी तरह भी उस ज़ीनेवाली कोठरी का हाल न मालूम हुआ, तो मैंने फिर दूसरी कार्रवाई की, जिसका हाल मैं आगे चलकर लिखूंगा। यहां पर इतना समझ लेना चाहिए कि रोज़ दिन के वक़्त मन्सूर बदस्तूर आता और पहर-छः घड़ी रहकर चला जाता था। मैं भी रोज़ बदस्तूर हवा खा आता था। मैं फिर उस मकान की तरफ़ नहीं गया था, और फिर मुझे कोई गुमनाम ख़त भी नहीं मिला था।

शायद नाज़रीन भी इस हिस्से की लिखावटों को पढ़कर कुछ समझे हों! लेकिन हां, मैं तो ज़रूर ही कुछ कुछ समझा था और मुझे शुरू से ही मन्सूर पर कुछ शक था! पस, वह शक क्योंकर रफ़ा हुआ और मेरी कार्रवाइयों से कैसा गुल खिला, यह आगे देखिए,—



इक्कीसवां बयान ।

एक दिन मैंने मन्सूर को बड़ी बड़ी खुशामदों से रात को रक्खा। वह सुबह से ही आगया था और तरह-तरह की गपशप मे सारा दिन बिता दिया गया था। रात के वक्त बड़ी नफ़ासत के साथ दस्तरखान चुना गया। तरह-तरह के उम्दा-उम्दा लज़ीज़ खाने, मेवे वगैरह और शाराज़ी शराब के प्याले व जाम भी दस्तर खान में क़रीने के साथ लगाए गए थे। मैंने मन्सूर से बहुत कुछ कह-सुन-कर उस बावर्ची लौंडे को भी खाने में शरीक किया था।

ग़रज़, दस्तरखान तो शाम ही से चुना जा रहा था, लेकिन खाना ठीक आठ बजे रात को शुरू हुआ। खाने के वक़्त, गो, मैं मन्सूर के साथ दिल्लगी-मज़ाक करता हुआ उस बावर्ची लौंडे से भी कुछ छेड़छाड़ करता जाता था, लेकिन वह सिवा ज़रा सा मुस्कुरा देने के एक लफ़्ज़ भी नहीं. कहता था। गो, मेरी खातिर मेरे दोस्त मन्सूर ने उस लड़के से कहा कि,—'इस वक़्त बेतक़ल्लुफ़ी के साथ गुफ़्तगू करो; लेकिन फिर भी वह बिल्कुल खामोश ही रहा और हर एक बात पर सिवा मुस्कुरा देने के कुछ भी न बोला। उसके इस अजीब तौर व तरीके को देखकर मैं दिल ही दिल में जल उठा, लेकिन ज़ाहिरा में मैं बराबर छेड़छाड़ करता रहा।

उस वक़्त मैंने खूब दिल खोलकर इस तरह का मज़ाक शुरू किया कि उन दोनों का खयाल बिल्कुल बँट गया और उन दोनों ने मेरे हाथ से लेकर दो दो प्याले शराब के ख़ाली कर दिए; लेकिन मैं बिल्कुल कोरा रह गया, यानी मैंने मुतलक शराब न पीई, और यह बात उन दोनों ने ज़रा न भाँपी। ख़ैर, यों ही निहायत बेतकल्लुफ़ी के साथ खाना खाया गया उसके बाद मेवा

की बारी आई; बाद में भी मैंने उन दोनो को दो दो प्याले शराब के पिलाए। यों हीं दस बजे रात तक यही सिलसिला ज़ारी रहा, इसके बाद मैंने सितार बजाना और गाना शुरू किया। यहां पर यह समझ लेना चाहिए कि एक निहायत उम्दा सितार मैं ख़रीद लाया था।

मेरे गाने-बजाने से मस्त होकर वे दोनो झूमने लगे और बारह बजते-बजते कमरे के फ़र्शपर लेटकर बेहोश होगए!

नाज़रीन! यह मेरी ही कारस्तानी थी, यानी मैंने ही शराब में एक हलकी सी बेहोशी की दवा चुपचाप मिलाकर उन दोनों को बेहोश कर दिया था, क्योंकि मुझे मन्सूर और उस बावर्ची लौंडे पर कुछ शक होगया था।

ख़ैर, मैंने उन दोनो के बेहोश होजाने पर दस्तरख़ान को समेट कर अलग रख दिया और उन दोनों की जांच करनी शुरू की।

नाज़रीन! मेरा शक सही था और ये दोनों (मन्सूर और बावर्ची लौंडा) दर असल औरतें थीं; इनमें से मन्सूर तो मेरी वही वफ़ादार औरत थी, जिसका ज़िक्र इसी हिस्से के बारहवें बयान में किया जाचुका है; और वह बावर्ची लौंडा उसकी सहेली थी!!!

पांचवां हिस्सा ख़तम।



आगे का हाल छठवें हिस्से में देखो।